सूर-संग्रह

संग्रहकर्त्ता एवं सम्पादक

श्री बलभद्रप्रसाद मिश्र

पूर्व प्रधान मन्त्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग



२०१३

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

सूर-सग्रह

संग्रहकर्त्ता एवं सम्पादक

श्री बलभद्रप्रसाद मिश्र

पूर्व प्रधान मन्त्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

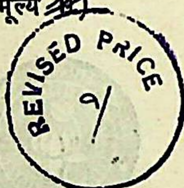


२०१३

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

पाँचवीं बार २०००

मूल्य



सम्मेलन मुद्रणालय, प्रयाग

28

प्रकाशकीय

महाकवि सूरदास के पदों के छोटे-बड़े कई संग्रह अब तक प्रकाशित हो चुके हैं। फिर भी एक ऐसे संग्रह की आवश्यकता बनी थी, जिससे हिन्दी के इस श्रेष्ठ कवि की सब प्रकार की प्रवृत्तियों और विशेषताओं का थोड़े में ही प्रतिनिधित्व हो सके। सूरदासजी ने रामचरित को लेकर भी सुन्दर रचना की है, यह तो प्रायः भुला ही दिया जाता है। इस संग्रह में कूट, केवल कथा-प्रसंगों का आभास देने वाले तथा कला-प्रदर्शन के ऊहात्म पद नहीं लिये गये हैं। सूर-काव्य के रसिक, विद्यार्थी समुदाय तथा सामान्य साहित्यिक रुचि के पाठक की तुष्टि की दृष्टि से यह 'सूर-संग्रह' प्रकाशित किया जा रहा है। हमें पूर्ण विश्वास है कि हिन्दी-जगत् इस पुस्तक का उचित समादर करेगा।

—कृष्णदेव प्रसाद गौड़
साहित्य मन्त्री

विनय

(१)

चरन-कमल वन्दौं हरि-राइ।
जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै, अन्धे कौं सब कछु दरसाइ॥
बहिरौ सुनै, गूंग पुनि बोलै, रंक चलै सिर छत्र धराइ।
सूरदास स्वामी करुनामय, बार बार बन्दौं तिहिं पाइ॥

(२)

काहू के कुल तन न विचारत।
अविगत की गति कहि न परति है, व्याध-अजामिल तारत।
कौन जाति अरु पाँति विदुर की, ताही कैं पग धारत।
भोजन करत माँगि घर उनके, राज-मान-मद टारत॥
ऐसे जनम करम के ओछे ओछिनि हूँ ब्यौहारत।
यहै सुभाव सूर के प्रभु कौ, भक्त-बछल-प्रन पारत॥

(३)

कहा गुन बरनौं स्याम, तिहारे।
कुबिजा, विदुर, दीनद्विज, गनिका, सबके काज सँवारे॥
जज्ञ-भाग नहिं लियौ हेत सौं रिषिपति पतित बिचारे।
भिल्लिनि के फल खाए भाव सौं खाटे-मीठे-खारे॥
कोमल कर गोवर्धन धार्‍यो जब हुते नन्द-दुलारे।
दधि-मिस आपु बँधायौ दाँवरि, सुत कुबेर के तारे॥
गरुड़ छाँड़ि प्रभु पायँ पियादे गज-कारन पग धारे।
अब मोसौं अलसात जात हौ अधम-उधारन हारे॥

कहँ न सहाय करी भक्तिन की, पाण्डव जरत उबारे।
सूर परी जहँ विपति दीन पर, तहाँ विघन तुम टारे।।

(४)

जापर दीनानाथ ढरै।
सोइ कुलीन, वड़ौ सुन्दर सोइ, जिहिं पर कृपा करै।।
कौन विभीषन रंक - निसाचर, हरि हँसि छत्र धरै।
राजा कौन वड़ौ रावन तैं, गर्वहिं - गर्व गरै।।
रंकव कौन सुदामाहूँ तैं, आप समान करै।
अधम कौन है अजामील तैं, जम तहँ जात डरै।।
कौन विरक्त अधिक नारद तैं, निशि - दिन भ्रमत फिरै।
जोगी कौन वड़ौ संकर तैं, ताकौं काम छरै।।
अधिक कुरूप कौन कुबिजा तैं, हरि पति पाइ तरै।
अधिक सुरूप कौन सीता तैं, जनम वियोग भरै।।
यह गति - मति जानै नहिं कोऊ, किहिं रस रसिक ढरै।
सूरदास भगवन्त - भजन विनु फिर फिरि जठर जरै।।

(५)

अब हौं माया - हाथ विकानौ।
परबस भयौ पसू ज्यौं रजु-वस, भज्यौ न श्रीपति रानौ।।
हिंसा-मद-ममता रस भूल्यौ, आसाहीं लपटानौ।
याही करत अधीन भयौ हौं, निद्रा अति न अघानौ।।
अपनें ही अज्ञान तिमिर में, विसरचौ परम ठिकानौ।
सूरदास की एक आँखि है, ताहू मैं कछु कानौ।।

(६)

माधौ जू, यह मेरी इक गाइ।
अब आज तैं आप - आगैं दई, लै आइयै चराइ।।

यह अति हरहाई, हटकत हूँ वहुत अमारग जाति।
फिरति वेद-वन-ऊख उखारति, सब दिन अरु सब राति।।
हित करि मिलै लेहु गोकुलपति, अपने गोधन माहँ।
सुख सोऊँ सुनि वचन तुम्हारे, देहु कृपा करि वाहँ।।
निधरक रहौं सूर के स्वामी, जनि मन जानौ फेरि।
मन-ममता रुचि सौं रखवारी, पहिलैं लेहु निवेरि।।

(७)

जनम सिरानौई सौं लाग्यौ।
रोम रोम, नख-सिख लौं मेरे, महा अघनि वपु पाग्यौ।।
पंचनि के हित-कारन यह मन जहँ तहँ भरमत भाग्यौ।
तीनौ पन ऐसैंहीं खोए, समय गए पर जाग्यौ।।
तौ तुम कोऊ तार्यौ नहिं जो, मोसौं पतित न दाग्यौ।
हौं स्रवननि सुनि कहत न एकौ; सूर सुधारौ आग्यौ।।

(८)

जा दिन मन पंछी उड़ि जैहैं।
ता दिन तेरे तन-तरुवर के सबै पात झरि जैहैं।।
या देही कौ गरव न करियै, स्यार-काग-गिध खैहैं।
तीननि में तन कृमि, कै विष्टा, कै ह्वै खाक उड़ैहैं।।
कहँ वह नीर, कहाँ वह सोभा, कहँ रँग-रूप दिखैहैं।
जिन लोगनि सौं नेह करत है, तेई देखि घिनैहैं।।
घर के कहत सवारे काढ़ौ, भूत होहु धरि खैहैं।
जिन पुत्रनिहिं वहुत प्रतिपाल्यौ, देवी-देव मनैहैं।।
तेई लै खोपरी वास दै, सीस फेरि विखरैहैं।
अजहूँ मूढ़ करौ सतसंगति, संतनि मैं कछु पैहैं।।

नर-वपु धारि नाहिं जन हरि कौं, जम की मार सो खैहैं।
सूरदास भगवन्त-भजन बिनु वृथा सु जनम गँवैहैं॥

(९)

अब कैं राखि लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठ्यौ द्रुम-डरिया, पारधि साधे बान॥
ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर ढुक्यौ सचान।
दुहूँ भाँति दुख भयौ आनि यह, कौन उबारे प्रान?
सुमिरत ही अहि डस्यौ पारधि, कर छूट्यौ संधान।
सूरदास सर लग्यौ सचानहिं, जय-जय कृपानिधान॥

(१०)

मो सम कौन कुटिल खल कामी।
तुम सौं कहा छिपी करुनामय, सब के अन्तरजामी॥
जो तन दियौ ताहि बिसरायौ, ऐसौ नोन-हरामी।
भरि भरि द्रोह विषै कौं धावत, जैसैं सूकर ग्रामी॥
सुनि सतसंग होत जिय आलस, विषयनि सँग लवरामी।
श्रीहरि-चरन छाँड़ि बिमखनिकी निसि-दिन करत गुलामी॥
पापी परम, अधम, अपराधी, सब पतितनि मैं नामी।
सूरदास प्रभु अधम-उधारन सुनियै श्रीपति स्वामी॥

(११)

अब मैं नाच्यौ बहुत गोपाल।
काम-क्रोध को पहिरि चोलना कण्ठ विषय की माल॥
महामोह के नूपुर बाजत, निंदा-शब्द-रसाल।
भ्रम-भोयौ मन भयौ पखावज, चलत असंगत चाल॥
तृष्ना नाद करति घट भीतर, नाना विधि दै ताल।

माया को कटि फेंटा दांध्यौं, लोभ - तिलक दियौ भाल।।
कोटिक कला काछि दिखराई जल-थल सुधि नहिं काल।
सूरदास की सवै अविद्या दूरि करौ नन्दलाल।।

(१२)

तेऊ चाहत कृपा तुम्हारी।
जिनकैं वस अनिमिष अनेक गन अनुचर आज्ञाकारी।।
वहत पवन, भरमत ससि-दिनकर, फनपति सिर न डुलावैं।
दाहक गुन तजि सकत न पावक, सिन्धु न सलिल वढ़ावैं।।
सिव-विरंचि-सुरपति-समेत सव सेवत प्रभु - पद चाए।
जो कछु करन कहत सोई कीजत अति अकुलाए।।
तुम अनादि, अविगत, अनन्त - गुन - पूरन परमानन्द।
सूरदास पर कृपा करौ प्रभु, श्री वृन्दावन - चन्द।।

(१३)

मेरौ मन अनत कहाँ सुचुपावै।
जैसें उड़ि जहाज कौ पच्छी, फिरि जहाज पर आवै।।
कमल - नैन कौ छाँड़ि महातम, और देव कौं ध्यावै।
परम गंग कौं छाँड़ि पियासौ, दुर्मति कूप खनावै।।
जिहिं मधुकर अम्वुज-रस चाख्यौ, क्यौं करील - फल भावै।
सूरदास - प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै।।

(१४)

हमारी तुमकौं लाज हरी!
जानत हौ प्रभु, अन्तरजामी, जो मोहिं माँफ परी।।
अपनैं औगुन कहँ लौं वरनौं, पल पल, घरी घरी।
अति प्रपंच की मोट वाँधि कैं, अपनैं सीस धरी।।

खेवनहार न खेवट मेरैं, अब मो नाव अरी।
सूरदास प्रभु, तव चरननि की आस लागि उवरी॥

(१५)

हमारे प्रभु औगुन चित न धरौ।
समदरसी है नाम तुम्हारौ, सोई पार करौ॥
इक लोहा पूजा में राखत, इक घर वधिक परौ।
सो दुविधा पारस नहिं जानत, कंचन करत खरौ॥
इक नदिया इक नार कहावत, मैलौ नीर भरौ।
जब मिलि गए तब एक वरन ह्वै गंगा नाम परौ॥
तन माया, ज्यौं ब्रह्म कहावत, सूर सु मिलि बिगरौ।
कै इनकौ निरधार कीजियै, कै प्रन जात टरौ॥

(१६)

अव मेरी राखौ लाज मुरारी।
संकट मैं इक संकट उपजौ, कहै मिरग सौं नारी॥
औंर कछू हम जानति नाहीं, आई सरन तिहारी।
उलटि पवन जब बावर जरियौ, स्वान चल्यौ सिर झारी॥
नाचन - कूदन मृगिनी लागी, चरन कमल पर वारी।
सूरस्याम - प्रभु अविगत - लीला, आपुहिं आपु सँवारी॥

रामचरित

(१)

आजु दसरथ कैं आँगन भीर।
ये भू - भार उतारन कारन प्रगटे स्याम - सरीर॥
फूले फिरत अयोध्या - वासी, गनत न त्यागत चीर।
परिरंभन हँसि देत परसपर, आनँद - नैननि नीर॥
त्रिदस - नृपति, रिषि व्यौम-विमाननि-देखत रह्यौ न धीर।

त्रिभुवन-नाथ दयालु दरस दै, हरी सबनि की पीर।।
देत दान राख्यौ न भूप कछु, महा बड़े नग हीर।
भए निहाल सूर सब जाचक, जे जाँचे रघुवीर।।

(२)

धनुहीं - बान लए कर डोलत।
चारौ बीर संग इक सोभित, वचन मनोहर बोलत।।
लछिमन भरत सत्रुहन सुन्दर, राजिवलोचन राम।
अति सुकुमार, परम पुरुषारथ, मुक्ति-धर्म-धन-धाम।।
कटि-तट पीत पिछौरी बाँधै, काकपच्छ धरे सीस।
सर-क्रीड़ा दिन देखन आवत, नारद, सुर तैंतीस।।
सिव-मन सकुच, इंद्र-मन आनँद, सुख-दुख विधिहिं समान।
दिति दुर्बल अति, अदिति हृष्टचित, देखि सूर संधान।।

(३)

कर कंपै, कंकन नहिं छूटै।
राम सिया-कर-परस मगन भए, कौतुक निरखि सखी सुख लूटै।।
गावत नारि गारि सद दै दै, तात भ्रात की कौन चलावै।
तब कर-डोरि छुटै रघुपति जू, जब कौसिल्या माता आवै।।
पूगी-फल-जुत-जल निरमल धरि, आनी भरि कुंडी जो कनक की।
खेलत जूप सकल जुवतिनि मैं, हारे रघुपति, जिती जनक की।।
धरे निसान अजिर गृह मंगल, विप्र बेद-अभिषेक करायौ।
सूर अमित आनन्द जनकपुर, सोइ सुकदेव पुराननि गायौ।।

(४)

तुम जानकी, जनकपुर जाहु।
कहा आनि हम संग भरमिहौ, गहवर बन दुख-सिन्धु अथाहु।।

तजि वह जनक-राज-भोजन-सुख, कत तृन-तलप, विपिन-फलखाहु। ग्रीष्मा
ग्रीषम कमल-वदन कुम्हिलैहै, तजि सर निकट दूरि कित न्हाहु॥
जनि कछु प्रिया, सोच मन करिहौ, मातु-पिता-परिजन-सुख लाहु।
तुम घर रहौ सीख मेरी सुनि, नातरु बन बसिकै पछिताहु॥
हौं पुनि मानि कर्मकृत रेखा, करिहौं तात-वचन-निरबाहु।
सूर सत्य जो पतिव्रत राखौ, चलौ संग - जनि, उतहीं जाहु॥

(५)

मेरी नौका जनि चढ़ौ त्रिभुवनपति राई।
मो देखत पाहन तरे, मेरी काठ की नाई॥
मैं खेई ही पार कौं, तुम लउटि मँगाई।
मेरौ जिय यौंही डरै, मति होहि सिलाई॥
मैं निरवल वित-वल नहीं, जो और गढ़ाऊँ।
मो कुटुम्ब याही लग्यौ, ऐसी कहँ पाउँ?
मैं निर्धन, कछु धन नहीं, परिवार घनेरौ।
सेमर - ढाकहिं काटि कै, बाँधौं तुम वेरौ॥
वार - वार श्रीपति कहैं, धीवर नहिं मानै।
मन प्रतीति नहिं आवई, उड़िवौ ही जानै॥
नेरैं ही जलथाह है, चलौ तुम्हें बताऊँ।
सूरदास की विनती, नीकैं पहुँचाऊँ॥

(६)

कहि धौं सखी बटाऊ को हैं?
अद्भुत वधू लिए संग डोलत देखत त्रिभुवन मोहैं॥
परम सुसील सुलच्छन जोरी, विधि की रची न होइ।
काकी तिनकौं उपमा दीजै, देह धरै धौं कोइ॥
इनमैं को पतिआहि तिहारे, पुरजनि पूछैं धाइ।

राजिवनैन मैन की मूरति, सैननि दियौ बताइ॥
गई सकल मिलि संग दूरि लौं, मन न फिरत पुर-वास।
सूरदास स्वामी के बिछुरत, भरि भरि लेति उसास॥

(७)

तैं कैकई कुमंत्र कियौ।
अपने कर करि काल्हँ कायौ, हठ करि नृप-अपराध लियौ॥
श्रीपति चलत रह्यौ कहि कैसैं, तेरौ पाहन-कठिन हियौ।
मो अपराधी के हित कारन, तैं रामहिं बनवास दियौ॥
कौन काज महराज हमारैं, इहिं पावक परि कौन जियौ?
लोट सूर धरनि दोउ बंधू, मनौ तपत-विष विषम पियौ॥

(८)

फिरत प्रभु पूछत बन-द्रुम-बेली।
अहो बंधु, काहूँ अवलोकी इहिं मग बधू अकेली?
कहो विहंग, अहो पन्नग-नृप, या कंदर के राइ।
अबकैं मेरी विपति मिटावौ, जानकि देहु बताइ॥
चंपक-पुहुप-बरन-तन-सुंदर, मनौ चित्र-अवरेखी।
हो रघुनाथ, निसाचर कैं संग अबै जात हौं देखी॥
यह सुनि धावति धरनि, चरन की प्रतिभा पथ मैं पाई।
नैन-नीर रघुनाथ सानि सो, सिव ज्यौं गात चढ़ाई॥
कहुँ हिय-हार, कहूँ कर-कंचन, कहुँ नूपुर कहुँ चीर।
सूरदास बन-बन अवलोकत, बिलख बदन रघुबीर॥

(९)

धनि जननी जो सुभटहिं जावै।
भीर परैं रिपु कौ दल दलि-मलि, कौतुक करि दिखरावै॥
कौसिल्या सौं कहति सुमित्रा, जनि स्वामिनि दुख पावै।

लछिमन जनि हौं भई सपूती , राम-काज जो आवै ।।
जीवै तौ सुख विलसै जग मैं, कीरति लोकनि गावै ।
मरै तौ मंडल भेदि भानु कौ, सुरपुर जाइ बसावै ।।
लोह गहैं लालच करि जिय कौ, औरौ सुभट लजावै ।
सूरदास प्रभु जीति सत्रु कौं, कुशल-छेम घर आवै ।।

(१०)

सुनौ कपि, कौसिल्या की बात ।
इहिं पुर जानि आवहि मम वत्सल, विनु लछिमन लघु भ्रात ।।
छांड़यौ राज-काज माता-हित, तुव चरननि चित लाइ ।
ताहि विमुख जीवनाधिक रघुपति, कहियो कपि समुझाइ ।।
लछिमन सहित कुसल बैदेही, आनि राज पुर कीजै ।
नातरु सूर सुमित्रा-सुत पर वारि अपुनपौ दीजै ।।

(११)

विनती कहियौ जाइ पवनसुत, तुम रघुपति के आगे ।।
या पुर जनि आवहु विनु लछिमन, जननी-लाजनि-लागे ।।
मारुत सुतहिं सँदेस सुमित्रा ऐसैं कहि समुझावै ।
सेवक जूझि परै रन भीतर, ठाकुर तउ घर आवै ।।
जब तैं तुम गवने कानन कौं, भरत भोग सब छाँड़े ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस, बिनु दुख-समूह उर गाड़े ।।

(१२)

आजु अति कोपे हैं रन राम ।
ब्रह्मादिक आरूढ़ विमाननि, देखत हैं संग्राम ।।
घन तन दिव्य कवच सजि करि अरु कर धारयौ सारंग ।
सुचि करि सकल बान सूधे करि, कटि-तट कस्यौ निषंग ।।
सुरपुर तैं आयौ रथ सजि कै, रघुपति भए सवार ।

काँपी भूमि कहा अब ह्वै, सुमिरत नाम मुरारि॥
छोभित सिंधु, सेष, सेष-सिर कंपित, पवन भयौ गति पंग।
इंद्र हँस्यौ, हर हिय बिलखान्यौ, जानि बचन कौ भंग॥
घर-अंबर दिसि-बिदिसि, बढ़े अति सायक किरन-समान।
मानौ महा-प्रलय के कारन, उदित उभय षट भान॥
टूटत धुजा-पताक-छत्र-रथ, चाप-चक्र-सिरत्रान।
जूझत सुभट जरत ज्यौं दव द्रुम बिनु साखा बिनु पान॥
स्रोनित छिछ उछरि आकासहिं, गज-बाजिनि-सिर लागि।
मानौ निकरि तरिनि-रंध्रनि तैं, उपजी है अति आगि॥
परि कबंध भहराइ रथनि तैं, उठत मनौ झर जागि।
फिरत सृगाल सज्यौ सब काटत चलत सो सिर लै भागि॥
रघुपति रिस पावक प्रचंड अति, सीता-स्वास समीर।
रावन-कुल अरु कुंभकरन बन सकल सुभट रनधीर॥
भए भस्म कछु बार न लागी, ज्यौं ज्वाला पट चीर।
सूरदास प्रभु आपु बाहुबल कियौ निमिष मैं कीर॥

(१३)

हमारी जन्मभूमि यह गाउँ।
सुनहु सखा सुग्रीव-बिभीषन, अवनि अजोध्या नाउँ॥
देखत बन-उपवन-सरिता-सर, परम मनोहर ठाउ।
अपनी प्रकृति लिए बोलत हौ, सुरपुर मैं न रहाउँ॥
ह्याँ के बासी अवलोकत हौं, आनंद उर न समाउँ।
सूरदास जौ बिधि न सकोचै तौ बैकुंठ न जाउँ॥

(१४)

अति सुख कौसिल्या उठि धाई।
उदित बदन मन मुदित सदन तैं, आरति साजि सुमित्रा ल्याई॥
जनु सुरभी बन बसति बच्छ बिनु, परबस पसुपति की बहराई।

चली साँझ समुहाइ स्रवत थन, उमँगि मिलन जननी दोउ आई ॥
दधि-फल-दूव कनक-कोपर भरि, साजत सौंज विचित्र वनाई।
अमी-वचन सुनि होत कुलाहल, देवनि दिवि दुंदुभी वजाई ॥
बरन-बरन पट परत पाँवड़े, वीथिनि सकल सुगंध सिंचाई।
पुलकित-रोम, हरख-गदगद-स्वर, जुवतिनि मंगल-गाथा गाई ॥
निज मंदिर मैं आनि तिलक दै द्विज-गन मुदित असीस सुनाई।
सिया-सहित सुख वसौ इहाँ तुम, सूरदास नित उठि वलि जाई ॥

वात्सल्य

(१)

देवकी मन-मन चकित भई।
देखहु आइ पुत्रमुख काहे न, ऐसी कहुँ देखी न दई ॥
सिर पर मुकुट, पीत उपरैना, भृगु-पद उर, भुज चारि धरे।
पूरब कथा सुनाइ कही हरि, तुम माँग्यौ इहिं भेष करे ॥
छोरे निगड़, सो आए पहरू, द्वारे कौ कपाट उघरयौ।
तुरत मोहिं गोकुल पहुँचावहु यह कहि कै सिसु वेष धरयौ ॥
तब बसुदेव उठे यह सुनतहिं, हरषवंत नँद-भवन गए।
बालक धरि, लै सुरदेवी कौं, आइ सूर मधुपुरी ठए ॥

(२)

अहो पति सो उपाइ कछु कीजै।
जिहिं उपाइ अपनौ यह वालक, राखि कंस सौं लीजै ॥
मनसा, वाचा, कहत कर्मना, नृप कबहूँ न पतीजै।
बुधि, वल, छल, कल, कैसेंहु करिकै, काढ़ि अनतहीं दीजै ॥
नाहिं न इतनौ भाग जो यह रस, नित लोचन-पुट पीजै।
सूरदास ऐसे सुत की जस, स्रवननि सुनि-सुनि जीजै ॥

(३)

उठी सखी सब मंगल गाइ।
जागु जसोदा, तेरै बालक उपज्यौ, कुँवर कन्हाइ॥
जो तू रच्यौ-सच्यौ या दिन कौं, सो सब देहि मँगाइ।
देहि दान बंदी जन गुनि-गन, ब्रज-बासिनि पहिराइ॥
तब हँसि कहति जसोदा ऐसैं, महरहिं लेहु बुलाइ।
प्रगट भयौ पूरब तप कौ फल, सुत-मुख देखौ आइ॥
आए नंद हँसत तिहिं औसर, आनँद उर न समाइ।
सूरदास ब्रजवासी हरषे, गनत न राजा-राइ॥

(४)

सोभा-सिंधु न अंत रही री।
नंद-भवन भरि पूरि उमँगि चलि, ब्रज की बीथिनि फिरति बही री॥
देखी जाइ आजु गोकुल मैं, घर-घर बेंचति फिरति दही री।
कहँ लगि कहौं बनाइ बहुत विधि, कहत न मुख सहसहुँ निबही री॥
जसुमति-उदर-अगाध-उदधि तैं, उपजी ऐसी सबनि कही री।
सूर स्याम प्रभु इंद्र-नीलमनि, ब्रज-बनिता उर लाइ गही री॥

(५)

(माई) आजु तौ बधाइ बाजै मँदिर महर के,
फूले फिरैं गोपी-ग्वाल ठहर-ठहर के।
फूली फिरैं धेनुधाम, फूली गोपी अँग अँग,
फूले फरे तरवर आनंद लहर के॥
फूले बंदीजन द्वारे, फूले फूले बंदवारे,
फूले जहां जोइ सोइ गोकुल सहर के।
फूलैं फिरैं जादौकुल आनँद समूल मूल,
अंकुरित पुन्य फूले पाछिले पहर के॥

उमँगे जमुन-जल, प्रफुलित कंज-पुंज,
गरजत कारे भारे जूथ जलधर के।
नृत्यत वदन फूले, फूली रति अँग-अँग,
मन के मनोज फूले हलधर वर के।
फूले द्विज-संत-वेद, मिटि गयौ कंस-खेद,
गावत बधाई सूर भीतर-बाहर के।
फूली है जसोदा रानी, सुत जायौ सारंगपानी,
भूपति उदार फूले भाग फरे घर के॥

(६)

जसोदा हरि पालनैं झुलावैं।
हलरावै, दुलराइ मल्हावै, जोइ-सोइ कछु गावैं॥
मेरे लाल कौं आउ निंदरिया, काहैं न आनि सुवावै।
तू काहैं नहिं बेगिहिं आवै, तोकौं कान्ह बुलावै॥
कबहुँ पलक हरि मूँदि लेत हैं, कबहुँ अधर फरकावैं।
सोवत जानि मौन ह्वै कै रहि, करि-करि सैन बतावै॥
इहिं अंतर अकुलाइ उठे हरि, जसुमति मधुरैं गावै।
जो सुख सूर अमर-मुनि दुरलभ, सो नँद-भामिनि पावै॥

(७)

कर पग गहि, अँगुठा मुख मेलत।
प्रभु पौढ़े पालनैं अकेले, हरषि-हरषि अपनैं रंग खेलत॥
सिव सोचत, विधि बुद्धि विचारत, बट बाढ्यौ सागर-जल झेलत।
बिडरि चले घन प्रलय जानि कै, दिगपति दिग-दंतीनि सकेलत॥
मुनि मन भीत भए, भुव कंपित, सबे सकुचि सहसौ फन पेलत।
उन व्रज-बासिनि बात न जानी, समुझे सूर सकट पग ठेलत॥

(८)

जसुमति मन अभिलाष करै।
कब मेरौ लाल घुटुरुवनि रेंगै, कब धरनी पग द्वैक धरै॥
कब द्वै दाँत दूध के देखौं, कब तोतरैं मुख वचन झरै।
कब नंदहि बाबा कहि बोलै, कब जननी कहि मोहिं ररै॥
कब मेरौ अँचरा गहि मोहन, जोइ-सोइ कहि मोसौं झगरै॥
कब धौं तनक-तनक कछु खैहै, अपने कर सौं मुखहिं भरै॥
कब हँस बात कहैगौ मोसौं, जा छवि तैं दुख दूरि हरै।
स्याम अकेले आँगन छाँड़े, आदु गई कछु काज धरै॥
इहिं अंतर अँधवाइ उठ्यौ इक, गरजत गगन सहित थहरै।
सूरदास ब्रज-लोग सुनत धुनि, जो जहँ-तहँ सब अतिहिं डरै॥

(९)

हरि किलकत जसुदा की कनियाँ।
निरखि-निरखि मुख कहति लाल सौं, मो निधनी के धनियाँ॥
अति कोमल तन चितै स्याम कौ बार-बार पछितात।
कैसैं बच्यौ, जाउँ बलि तेरी, तृनावर्त कैं घात॥
ना जानौं धौं कौन पुन्य तैं, को करि लेत सहाइ।
वैसो काम पूतना कीन्हौ, इहिं ऐसौ कियौ आइ॥
माता दुखित जानि हरि बिहँसै, नान्ही दँतुलि दिखाइ।
सूरदास प्रभु माता चित तैं दुख डार्‌यौ बिसराइ॥

(१०)

सुत-मुख देखि जसोदा फूली।
हरषित देखि दूध की दँतियाँ, प्रेममगन तन की सुधि भूली॥
बाहिर तैं तब नंद बुलाए, देखौ धौं सुंदर सुखदाई।
तनक-तनक सी दूध-दँतुलियाँ, देखौ, नैन सफल करौ आई॥

आनँद सहित महर तब आए, मुख चितवन दोऊ नैन अघाई।
सूर स्याम किलकत द्विज देख्यौ, मनौ कमल पर विज्जु जमाई॥

(११)

आजु भोर तमचुर के रोल।
गोकुल में आनंद होत है, मंगल-धुनि महराने टोल॥
फूले फिरत नंद अति सुख भयौ, हरषि मँगावत फूल-तमोल।
फूली फिरति जसोदा तन-मन, उबटि कान्ह अन्हवाइ अमोल॥
तनक बदन, दोउ तनक-तनक कर, तनक चरन, पोंछति पट झोल।
कान्ह गरैं सोहति मनि-माला, अंग अभूषन कँगुरिनि गोल॥
सिर चौतनी डिठौना दीन्हौ, आँखि आँजि पहिराइ निचोल।
स्याम करत माता सौं झगरौ, अटपटात कलबल करि बोल॥
दोउ कपोल गहि कै मुख चूमति, बरष-दिवस कहि करति कलोल।
सूर स्याम ब्रज-जन-मोहन-बरष-गाँठि कौ डोरा खोल॥

(१२)

खीझत जात माखन खात।
अरुन लोचन, भौंह टेढ़ी, बार-बार जँभात॥
कबहुँ रुनझुन चलत घुटुरुनि, धूरि धूसर गात।
कबहुँ झुकि कै अलक खैंचत, नैन जल भरि जात॥
कबहुँ तोतरे बोल बोलत, कबहुँ बोलत तात।
सूर हरि की निरखि सोभा, निमिष तजत न मात॥

(१३)

आंगन खेलत घुटुरुनि धाए।
नील-जलद-अभिराम स्याम तन, निरखि जननि दोउ निकट बुलाए॥
बंधुक-सुमन-अरुन-पद-पंकज, अंकुस प्रमुख चिन्ह बनि आए।
नूपुर-कलरव मनु हंसनि सुत रचे नीड़, दै बाँह बसाए॥

कटि किंकिनि बर हार ग्रीवदर, रुचिर बाहु भूषन पहिराए।
उर श्रीवच्छ मनोहर हरि-नंख, हेम-मध्य मनि-गन बहु लाए।।
सुभग चिबुक, द्विज अधर-नासिका, स्रवन-कपोल मोहिं सुठि भाए।
भ्रुव सुंदर करुना-रस-पूरन, लोचन मनहु जुगल जल जाए।।
भाल बिसाल ललित लटकन, मनि बाल-दसा के चिकुर सुहाए।
मानौ गुरु-सनि-कुज आगैं करि, ससिहिं मिलन तम के गन आए।।
उपमा एक अभूत भई तब, जब जननी पट पीत उड़ाए।
नील जलद पर उडुगन निरखत, तजि सुभाव मनु तड़ित छपाए।।
अंग-अंग-प्रति मार-निकर मिली, छबि-समूह लै-लै मनु छाए।
सूरदास सो क्यौं करि बरनै, जो छवि निगम नेति करि गाए।।

(१४)

किलकत कान्ह घुटुरुवनि आवत।
मनिमय कनक नंद कैं आँगन, बिंब पकरिबैं धावत।।
कबहुँ निरखि हरि आपु छाँह कौं, कर सौं पकरन चाहत।
किलकि हँसत राजत द्वै दतियाँ, पुनि-पुनि तिहिं अवगाहत।।
कनक-भूमि पर कर-पग-छाया, यह उपमा इक राजति।
करि-करि प्रतिपद प्रतिमनि बसुधा, कमल बैठकी साजति।।
बाल-दसा-सुख निरखि जसोदा, पुनि-पुनि नंद बुलावति।
अँचरा तर लै ढाँकि, सूर के प्रभु कौं दूध पियावति।।

(१५)

सिखवति चलत जसोदा मैया।
अरबराइ कर पान कहावत, डगमगाय धरनी धरै पैया।।
कबहुँक सुंदर बदन बिलोकति, उर आनँद भरि लेत बलैया।
कबहुँक कुल देवता मनावति, चिरजीवहु मेरौ कुँवर कन्हैया।।
कबहुँक बल कौं टेरि बुलावति, इहिं आँगन खेलौ दोउ भैया।
सूरदास स्वामी की लीला, अति प्रताप बिलसत नँदरैया।।

(१६)

भीतर तैं बाहर लौं आवत।
घर-आँगन अति चलत सुगम भए, देहरि अँटकावत।।
गिरि-गिरि परत, जात नहि उलँघी, अति स्रम होत नघावत।
अहुँठ पैग बसुधा सब कीनी, धाम अवधि बिरमावत।।
मनहीं मन बलबीर कहत हैं, ऐसे रंग बनावत।
सूरदास-प्रभु-अगनित-महिमा, भगतनि कैं मन भावत।।

(१७)

अद्‌भुत इक चितयौ हौं सजनी, नंद महर कैं आँगन री।
सो मैं निरखि अपुनपौ खोयौ, गई मथानी माँगन री।।
बाल-दसा मुख-कमल बिलोकत, कछु जननी सौं बोलै री।
प्रगटति हँसत दँतुलि, मनु सीपज दमिक दुरे दलओलै री।।
सुंदर भाल-तिलक गोरोचन, मिलि मसि-बिंदुका लाग्यौ री।
मनु मकरंद अचै रुचि कैं, अलि-सावक सोइ न जाग्यौ री।।
कुंडल लोल कपोलनि झलकत, मनु दरपन मैं झाई री।
रही बिलोकि बिचारि चारु छबि, परमिति कहूँ न पाई री।।
मंजुल तारनि की चपलाई, चित चतुराई करषै री।
मनौ सरातन धरे कर स्मर, भौंह चढ़ै सर बरषै री।।
जलधि थकित जनु काग पोत कौ कूल न कबहूँ आयौ री।
ना जानौं किहिं अंग मगन मन, चाहि रही नहिं पायौ री।।
कहँ लगि कहौं बनाइ बरनि छबि, निरखत मति-गति हारी री।
सूर स्याम के एक रोम पर देउँ प्रान बलिहारी री।।

(१८)

जब दधि-रिपु हरि हाथ लियौ।
खगपति-अरि डर, असुरनि संका, बासर-पति आनंद कियौ।।

बिढुखि सिंधु सकुचात, सिव सोंचत, गरलादिक किमि जात पियौ ?
अति अनुराग संग कमला-तन, प्रफुलित, अंग न समात हियौ ॥
एकनि, दुख एकनि सुख उपजत, ऐसौ कौन विनोद कियौ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे गहत ही एक-एक तैं होत वियौ ॥

(१९)

त्यौं-त्यौं मोहन नाचै ज्यौं-ज्यौं रई-घमरकौ होइ (री)।
तैसयै किंकिनि-धुनि पग-नूपुर, सहज मिले सुर दोइ (री) ॥
कंचन कौ कठुला मनि-मोतिनि, बिच बघ-नहँ रह्यौ पोइ (री)।
देखत बनै, कहत नहिं आवै, उपमा कौं नहिं कोइ (री) ॥
निरखि-निरखि मुख नंद-सुवन कौं, सुर-नर आनंद होइ (री)।
सूर भवन कौ तिमिर नसायौ, बलि गइ जननि जसोइ (री) ॥

(२०)

छोटी-छोटी गोड़ियाँ, अँगुरियाँ छबीली छोटी,
नख-ज्योती, मोती मानौ कमल-दलनि पर।
ललित आँगन खेलै, ठुमुकि-ठुमुकि डोलै,
झुनुक-झुनुक बोलै पैंजनी मृदु मुखर ॥
किंकिनी कलित कटि हाटक रतन जटि,
मृदु कर-कमलनि पहुँची रुचिर वर।
पियरी पिछौरी झीनी, और उपमा न भीनी,
बालक दामिनि मानौ ओढ़े बारौ वारि-धर ॥
उर बघ - नहाँ, कंठ कठुला, झँडूले बार,
बेनी लटकन मसि- बुंदा मुनि - मनहर।
अंजत रंजित नैन, चितवनि चित चोरै,
मुख-सोभा पर वारौं अमित असम-सर ॥
चुटुकी बजावति नचावति जसोदा रानी;

बाल-केलि गावति मल्हावति सुप्रेम भर।
किलकि-किलकि हँसैं, द्वै द्वै दँतुरियाँ लसैं,
सूरदास मन बसैं तोतरे बचन वर॥

(२१)

कहन लगे मोहन मैया-मैया।
नंद महर सौं बाबा-बाबा, अरु हलधर सौं भैया॥
ऊँचे चढ़ि-चढ़ि कहति जसोदा, लै-लै नाम कन्हैया।
दूरि खेलन जानि जाहु लला रे, मारैगी काहु की गैया॥
गोपी ग्वाल करत कौतूहल, घर-घर बजति बधैया।
सूरदास प्रभु तुम्हारें दरस कौं, चरननि की बलि जैया॥

(२२)

दोउ भैया मैया पै माँगत, दै री मैया माखन रोटी।
सुनत भावनी बात सुतनि की, झूठहिं धाम के काम अगोटी॥
बलजू गह्यौ नासिका-मोती, कान्ह कुँवर गही दृढ़ करि चोटी॥
मानौ हंस मोर भष लीन्हें, कवि उपमा बरनै कछु छोटी॥
यह छबि देखि नंद-मन आनँद, अति सुख हँसत जात हैं लोटी।
सूरदास मन मुदित जसोदा, भाग बड़े, कर्मनि की मोटी॥

(२३)

नैंकु रहौ, माखन द्यौं तुमकौं।
ठाढ़ी मथति जननि दधि आतुर, लौनी नंद-सुवन कौं॥
मैं बलि जाउँ स्याम-घन सुंदर, भूख लगी तुम्हैं भारी।
बात कहूँ की बूझति स्यामहिं, फेर करत महतारी॥
कहत बात हरि कछु न समुझत, झूठहिं भरत हुँकारी।
सूरदास प्रभु कैं गुन तुरतहिं बिसरि गई नँद-नारी॥

(२४)

देखौ माई दधि-सुत मैं दधि जात।
एक अचंभौ देखि सखी री, रिपु मैं रिपु जु समात॥
दधि पर कीर, कीर पर पंकज, पंकज केर द्वै पात।
यह सोभा देखत पसु-पालक, फूले अँग न समात॥
वारंवार विलोकि सोचि चित, नंद महर मुसुक्यात।
यहै ध्यान मन आनि स्याम कौ, सूरदास वलि जाति॥

(२५)

कजरी कौ पय पियहु लाल, जासौं तेरी बेनि वढ़ै।
जैसे देखि और व्रज वालक, त्यौं बल-वैस चढ़ै॥
यह सुनि कै हरि पीवन लागे, ज्यौं त्यौं लयौ लढ़ै।
अँचवत पय तातौ जव लाग्यौ, रोवत जीभि डढ़ै॥
पुनि पीवत हीं कच टकटोरत, झूठहि जननि रढ़ै।
सूर निरखि मुख हँसति जसोदा, सो सुख उर न कढ़ै॥

(२६)

मैया, कवहिं वढ़ैगी चोटी ?
किती वार मोहिं दूध पियत भई, यह अजहूँ है छोटी !
तू जो कहति वलि की वेनी, ज्यौं, ह्वै है लाँवी मोटी।
काढ़त-गुहत-न्हवावत जैहे नागिनी सी भुई लोटी॥
काँचो दूध पियावत पचि-पचि, देति न माखन रोटी।
सूरज चिरजीवौ दोउ भैया, हरि-हलधर की जोटी॥

(२७)

हरि अपनैं आँगन कछु गावत।
तनक-तनक चरननि सौं नाचत, मनहीं मनहीं रिझावत॥
वाँह उठाइ काजरी-धौरी गैयनि टेरि वुलावत।

कबहुँक बाबा नंद पुकारत, कबहुँक घर मैं आवत ।।
माखन तनक आपनैं कर लै, तनक बदन मैं नावत।
कबहुं चितै प्रतिबिंब खंभ मैं, लौनी लिए खवावत ।।
दुरि देखति जसुमति यह लीला, हरष अनंद बढ़ावत।
सूर स्याम के बाल-चरित, नित नितही देखत भावत ।।

(२८)

बलि-बलि जाउँ मधुर सुर गावहु।
अबकी बार मेरे कुँवर कन्हैया, नंदहिं नाचि दिखावहु ।।
तारी देहु आपने कर की, परम प्रीत उपजावहु।
आन जंतु-धुनि सुनि कत डरपत, मो भुज कंठ लगावहु ।।
जनि संका जिय करौ लाल मेरे, काहे कौं भरमावहु।
बाहँ उचाइ कालिह की नाईं, धौरी धेनु बुलावहु ।।
नाचहु नैंकु जाउँ बलि तेरी, मेरी साध पुरावहु।
रतन-जटित किंकिन पग-नूपुर, अपनैं रंग बजावहु ।।
कनक-खंभ प्रतिबिंबित सिसु इक, लवनी ताहि खवावहु।
सूर स्याम मेरे उरद तैं कहुँ टारे नैंकुँ न भावहु ।।

(२९)

मैया, मैं तो चंद-खिलौना लैहौं।
जैहौं लोटि धरनि पर अबहीं, तेरी गोद न ऐहौं ।।
सुरभी कौ पय पान न करिहौं, बेनी सिर न गुहैहौं।
ह्वै हौं पूत नंद बाबा की तेरौ सुत न कहैहौं ।।
आपैं आउ, बात सुनि मेरी, बलदेवहिं न जनैहौं।
हँसि समुझावति, कहति जसोमति, नई दुलहिया दैहौं ।।
तेरी सौं, मेरी सुनि मैया, अबहिं बियाहन जैहौं।
सूरदास ह्वै कुटिल बराती, गीत सुमंगल गैहौं ।।

(३०)

नंद-नँदन, इक सुनौ कहानी।
पहिली कथा पुरातन सुनी हरि जननि-पास मुख बानी।।
रामचंद दसरथ-सुत ताकी जनक-सुता गृह-रानी।
कहैं तात के, पंचवटी बन, छाँड़ि चले रजधानी।।
तहँ बसत सीता हरि लीन्ही, रजनीचर अभिमानी।
लछिमन, धनुष देहु, कहि उठे हरि, जसुमति सर डरानी।।

(३१)

जागिए, ब्रजराज, कुँवर, कमल-कुसुम फूलै।
कुमुद-बृंद सँकुचित भए, भृंग लता भूले।।
तमचुर खग-रोर सुनहु, बोलत बनराई।
राँभति गो खरिकनि मैं, बछरा हित धाई।।
बिधु मलीन रवि प्रकास गावत नर नारी।
सूर स्याम प्रात उठौ, अंबुज-कर-धारी।।

(३२)

खेलत स्याम ग्वालनि संग।
सुबल हलधर अरु श्रीदामा, करत नाना रंग।।
हाथ तारी देत भाजत सबै करि करि होड़।
बरजै हलधर, स्याम, तुम जनि चोट लागै गोड़।।
तब कह्यौ मैं दौरि जानत, बहुत बल मो गात।
मेरी जोरी है श्रीदामा, हाथ मारे जात।।
उठे बोलि तबै श्रीदामा, चाहु तारी मारि।
आगैं हरि पाछैं श्रीदामा, धर्‌यौ स्याम हँकारि।।
जानिकै मैं रह्यौ ठाढ़ौ, छुवत कहा जु मोहिं।
सूर हरि खीझत सखा सौं, मनहिं कीन्हौ कोह।।

(३३)

मैया मोहिं दाउ बहुत खिझायौ।
मोसौं कहत मोल को लीन्हौ, तू जसुमति कब जायौ ?
कहा करौं इहि रिस के मारैं खेलन हौं नहिं जात।
पुनि-पुनि कहत कौन है माता, को है तेरौ तात।।
गोरे नंद, जसोदा गोरी, तू कत स्यामल गात।।
चुटकी दै-दै ग्वाल नचावत, हँसत सबै मुसुकात।।
तू मोहीं कौं मारन सीखी, दाउहिं कबहु न खीझै।
मोहन-मुख रिस की ये बातैं, जसुमति सुनि-सुनि रीझै।।
सुनहु कान्ह बलभद्र चबाई, जनमत ही कौं धूत।
सूर स्याम मोहि गोधन की सौं, हौं माता तू पूत।।

(३४)

खेलत अब मेरी जाइ बलैया।
जबहिं मोहिं देखत लरिकन सँग तबहिं खिझत बल भैया।।
मोसौं कहत तात वसुदेव कौ, देवकि तेरी मैया।
मोल लियौ कछु दै कवि तिनकौं, करि-करि जतन बढ़ैया।।
अब बाबा कहि कहत नंद सौं, जसुमति सौं कहै मैया।
ऐसैं कहि सब मोहिं खिझावत, तब उठि चल्यौ खिसैया।।
पाछै नंद सुनत हे ठाढ़े, हँसत हँसत उर लैया।
सूर नंद बलरामहिं धिरयौ, तब मन हरष कन्हैया।।

(३५)

जेंवत स्याम नंद की कनियाँ।
कछुक खात, कछु धरनि गिरावत, छबि निरखति नंद-रनियाँ।।
बरी, बरा, बेसन, बहु भांतिनि व्यंजन, बिबिध, अगिनियाँ।

डारत, खात, लेत अपनैं कर, रुचि मानत दधि दनियाँ ।।
मिस्री, दधि, माखन मिस्रित करि, मुख नावत छवि धनियाँ।
आपुन खात, नंद-मुख नावत, सो छवि कहत न बनियाँ ।।
जो रस नंद-जसोदा बिलसत, सो नहिं तिहूँ भुवनियाँ।
भोजन करि नंद अचमन लीन्हौ, माँगत सूर जूठनियाँ ।।

(३६)

खेलत में को काकौ गुसैयाँ।
हरि हारे जीते श्रीदामा, बरबस ही कत करत रिसैयाँ ।।
जाति-पांति हमतैं बड़ नाहीं, नाहीं बसत तुम्हारी छैयाँ।
अति अधिकार जनावत यातैं जातैं अधिक तुम्हारैं गैयाँ !
रुहठि करै तासौं को खेलै, रहे बैठि जहँ-जहँ सब ग्वैयाँ।
सूरदास प्रभु खेल्यौ चाहत, दाउँ दियौ करि नंद-दुहैयाँ ।।

(३७)

मोहन काहैं न उगिलौ माटी।
बार-बार अनरुचि उपजावति, महरि हाथ लिए साँटी ।।
महतारी सौं मानत नाहीं, कपट-चतुराई ठाटी।
बदन उघारि दिखायौ अपनौ, नाटक की परिपाटी ।।
बड़ी बार भई, लोचन उघरे, भरम-जवनिका फाटी।
सूर निरखि नँदरानि भ्रमति भई कहति न मीठी-खाटी ।।

(३८)

गए स्याम तिहिं ग्वालिनि कैं घर।
देख्यौ द्वार नहीं कोउ, इत-उत चितै, चले तब भीतर ।।
हरि आवत गोपी जब जान्यौ, आपुन रही छपाइ।
सूनें सदन मथनियां कैं ढिग, बैठि रहे अरगाइ ।।

माखन भरी कमोरी देखत, लै-लै लागे खान।
चितै रहे मनि-खंभ-छाँह-तन, तासौं करत सयान।।
प्रथम आज मैं चोरी आयौ, भली वन्यौ है संग।
आपु खात, प्रतिबिंब खवावत, गिरत कहत, का रंग?
जौ चाहौ सब देऊँ कमोरी अति मीठी कत डारत।
तुमहिं देति मैं अतिसुख पायो, तुम जिय कहा विचारत?
सुनि-सुनि वात स्याम के मुख की, उमँगि हँसी ब्रजनारी।
सूरदास प्रभु निरखि ग्वालि-मुख तव भजि चले मुरारी।।

(३९)

फूली फिरति ग्वालि मन मैं री।
पूछति सखी परस्पर वातैं, पायौ परचौ कछू कहुँ तैं री?
पुलकित रोम-रोम, गदगद, मुख बानी कहत न आवै।
ऐसौ कहा आहि सो सखिरी, हमकौं क्यौं न सुनावै।।
तन न्यारौ, जिय एक हमारौ, हम तुम एकै रूप।
सूरदास कहै ग्वालि सखिनि सौं, देख्यौ रूप अनूप।।

(४०)

गोपालहिं माखन खान दै।
सुनि री सखी, मौन है रहिए, बदन दही लपटान दै।।
गहि बहियाँ हौं लै कै जैहौं, नैननि तपित वुझान दै।
याकौ जाइ चौगुनी लैहौ, मोहिं जसुमति लौ जान दै।।
तू जानति हरि कछू न जानत, सुनत मनोहर कान दै।
सूर स्याम ग्वालिनि वस कीन्हौ, राखति तन-मन-प्रान दै।।

(४१)

स्याम कहा चाहत से डोलत?
पूछे तैं तुम बदन दुरावत, सूधे बोल न बोलत।।

पाए आइ अकेले घर मैं, दधि-भाजन मैं हाथ।
अब तुम काकौ नाउँ लेउगे, नाहिन कोऊ साथ!
मैं जान्यौ यह मेरौ घर है, ता धोखैं मैं आयौ।
देखत हौं गोरस मैं चीटी, कान कौं कर नायौं।।
सुनि मृदु वचन, निरखि मुख-सोभा, ग्वालिनि मुरि मुसुकानी।।
सूर स्याम तुम हौ अति नागर बात तिहारी जानी।।

(४२)

माखन-चोर री मैं पायौ।
बहुत दिवस मैं कौरैं लागी, मेरी घात न आयौ।।
नित प्रति रीती देखि कमोरी मोहिं अति लगत भुंभायौ।।
तब मैं कह्यौ, जानि हौं पाई कौन चोर है आयौ।।
अब कर सौं कर गह्यौं, गह्यौ तब, मैं नहिं माखन खायौ।
विहँसत उघरि गई दतियाँ, लै सूर स्याम उर लायौ।।

(४३)

साँवरेहिं वरजति क्यौं जु नहीं।
कहा करौं दिन प्रति की बातैं, नाहिन परति सही।।
माखन खात, दूध लै डारत, लेपत देह दही।
ता पाछैं घरहू के लरिकनि, भाजत छिरकि मही।।
जो कछु धरहिं दुराइ दूरि लै, जानत ताहि तहीं।
सुनहु महरि, तेरे या सुत सौं, हम पचि हारि रहीं।।
चोरी अधिक चतुराई सीखी, जाइ न कथा कही।
तापर सूर बछुरुवनि ढीलत, बन-बन फिरति वही।।

(४४)

कहै जनि ग्वारिनि झूठी बात।
कबहूँ नहिं मनमोहन मेरौ, धेनु चरावन जात।।

बोलत है बतियाँ तुतराहीं, चलि चरननि न सकात।
कैसैं करै माखन की चोरी, कत चोरी दधि खात॥
देही लाइ तिलक केसरि कौ, जोबन-मद इतराति।
सूरज दोष देति गोविंद कौं, गुरु लोगनि न लजाति॥

(४५)

दधि लै मथति ग्वालि गरबीली।
रुनक-झुनक कर कंकन बाजै, बाहँ डुलावत ढीली॥
भरी गुमान विलोकति ठाढ़ी, अपनैं रंग रँगीली।
छवि की उपमा कहि न परति है, या छवि की जु छबीली॥
अति विचित्र गति कहि न जाइ अब, पहिरे सारी नीली।
सूरदास प्रभु माखन माँगत नाहिं न देति हठीली॥

(४६)

मथुरा जाति हौं बेचन दहियौ।
मेरे घर कौ द्वार, सखी री, तबलौं देखति रहियौ॥
दधि-माखन द्वै माट अछूते तोहिं सौंपति हौं सहियौ।
और नहीं या ब्रज मैं कोऊ, नंद-सुवन सखि लहियौं॥
ये सब बचन सुने मन-मोहन, वहै राह मन गहियौ।
सूर पौरि लौं गई न ग्वालिनि, कूदि परे दै धहियौ॥

(४७)

जसुदा तू जो कहति ही मोसौं।
दिन प्रति देत उरहनौ आवति, कहा तिहारैं कोसौं॥
यहै उरहनौ सत्य करन कौ, गोविन्दहिं गहि ल्याई।
देखन चली जसोदा सुत कौं ह्वै गए सुता पराई॥
तेरे नैन, हृदय, मति नाहीं, वदन देखि पहिचाने।

सुनु री सखी कहति डोलति है या कन्या सौं कान्है ।।
तैं तो नाम स्याम मेरे कौ, सूधौ करि है. पायौ।
सूरदास प्रभु देखि खरिक तैं अब हीं आपै आयौ ।।

(४८)

अपनौ गाऊँ लेउ नँदरानी।
बड़े बाप की बेटी, पूतहिं भली पढ़ावति बानी ।।
सखी-भीर लै पैठत घर में आपु खाइ तौ सहिए।
मैं जब चली सामुहैं पकरन, तब के गुन कहा कहिए ।।
भाजि गए दुरि देखत कतहूँ, मैं घर पौढ़ी आइ।
हरैं-हरैं बेनी गहि पाछैं, बाँधी पाटी लाइ ।।
सुनु मैया, याके गुन मोसौं, इन मोहिं लयौ बुलाई।
दधि मैं पड़ी सैंत की मोपे चीटी सबै कढ़ाई ।।
टहल करत मैं याके घर की यह पति सँग मिलि सोई।
सूर वचन सुनि हँसि जसोदा, ग्वालि रही मुख गोई ।।

(४९)

मैया मैं नहिं माखन खायौ।
ख्याल परैं यें सखा सबै मिलि, मेरे मुख लपटायौ ।।
देखि तुही छीके पर भाजन, ऊँचैं धरि लटकायौ।
हौं जु कहत नान्हे कर अपनैं मैं कैसैं करि पायौ ।।
मुख दधि पोंछि, बुद्धि इक कीन्हीं, दोना पीठि दुरायौ।
डारि सांटि, मुसुकाइ जसोदा, स्यामहिं कंठ लगायौ ।।
बाल-विनोद-मोद मन मोह्यौ, भक्ति-प्रताप दिदायौ।
सूरदास जसुमति कौ यह सुख, सिव विरंचि नहिं पायौ ।।

(५०)

जसुमति रिस करि-करि रजु करषैं।
सुत हित क्रोध देखि माता कैं, मनहीं मन हरि हरषैं ।।

उफनत छीर जननि करि व्याकुल, इहि विधि भुजा छुड़ायौ।।
भाजत फोरि दही सब डारयौ, माखन कीच मचायौ।
लै आई जेंवरि अब बंधौ, गरब जाननि बँधायौ।।
अगुर द्वै घटि होति सबनि सौं, पुनि-पुनि और मँगायौ।।
नारद-साप भए जमलार्जुन, तिनकौं अब जु उधारौ।
सूरदास प्रभु कहत भक्त-हित जनम-जनम तनु धारौ।।

(५१)

देखौ माई कान्ह हिलकियनि रोवै।
इतनक मुख माखन लपटान्यौ, डरनि आँसुवनि धोवै।।
माखन लागि उलूखल बांध्यौ, सकल लोग व्रज जोवै।
निरखि कुरुख उन बालनि की दिसि लाजनि अँखियनि गोवै।।
ग्वाल कहैं धनि जननि हमारी, सुकर सुरभि नित नोवै।
बरबस ही बैठारि गोद मैं, धारैं बदन निचोवै।।
ग्वाल कहैं या गोरस कारन, कत सुत की पति खोवै?
आनि देहिं अपने घर तैं हम, चाहति चितौ जसोवै।।
जब जब बंधन छोरयौ चाहति, सूर कहै यह को वै।
मन-माधौ-तन, चित गोरस मैं, इहिं बिधि महरि बिलोवै।।

(५२)

कहन लगीं अब बढ़ि-बढ़ि बात।
ढोटा मेरौ तुमहिं बंधायौ, तनकहिं माखन खात।।
अब मोहिं माखन देति मँगाए, मेरे घर कछु नाहिं!
उरहन कहि-कहि साँझ सवारैं, तुमहिं बँधायौ याहि।।
रिसहीं मैं मोकौं गहि दीन्हौ, अब लागीं पछितान।
सूरदास अब कहति जसोदा, बूझयौ सबकौ ज्ञान।।

(५३)

कान्ह सौं आवत क्यौंऽब रिसात।
लै लै लकुट कठिन कर अपनैं परसत कोमल गात॥
देखत आँसू गिरत नैन तें यौं सोभित ढरि जात।
मुक्ता मनौ चुगत खग खंजन, चोंच पुटी न समात॥
डरनि लोल डोलत हैं इहि विधि, निरखि भ्रुवनि सुनि बात।
मानौ सूर सकात सरासन, उड़िबे कों अकुलात॥

(५४)

यह सुनि कै हलधर तहँ धाए।
देखि स्याम ऊखल सौं बांधे, तबहीं दोउ लोचन भरि आए॥
मैं बरज्यौ कै बार कन्हैया, भली करी दोउ हाथ बँधाए।
अजहूँ छांड़ौगे लँगराई, दोउ कर जोरि जननि पै आए॥
स्यामहिं छोरि मोहिं बांधै बरु, निकसत सगुन भले नहिं पाए।
मेरे प्रान-जिवन-धन कान्हा, तिनके भुज मोहिं बँधे दिखाए॥
माता सौं कह करौं ढिठाई, सो सरूप कहि नाम सुनाए।
सूरदास तब कहति जसोदा दोउ भैया तुम इक मत पाए॥

(५५)

जसुदा तोहिं बांधि क्यौं आयौ।
कसक्यौ नाहिं नैकु मन तेरौ यहै कोखि कौ जायौ॥
सिव विरंचि महिमा नहिं जानत, सो गाइनि संग धायौ।
तातैं तू पहिचानति नाहीं, कौन पुन्य तैं पायौ।
कहा भयौ जो घर कैं लरिका, चोरी माखन खायौ॥
इतनी कहि उकसारत बाहैं, रोष सहित बल धायौ॥
अपनैं कर सब बँधन छोरे, प्रेम सहित उर लायौ।
सूर सुबचन मनोहर कहि-कहि अनुज सूल बिसरायौ॥

(५६)

जसोदा कान्हहु तैं दधि प्यारौ ?
डारि देहि कर मथत मथानी, तरसत नन्द-दुलारौ ॥
दूध-दही-माखन लै वारौं, जाहि करति तू गारौ।
कुम्हिलानौ मुख-चंद देखि छवि, कोह न नैंकु निवारौ ॥
ब्रह्म, सनक, सिव ध्यान न पावत, सो ब्रज गैयनि चारौ।
सूर स्याम पर वलि-वलि जैए, जीवन - प्रान हमारौ ॥

(५७)

मोहिं कहति जुवती सब चोर।
खेलत कहूँ रहौं मैं वाहिर, चितै रहति सब मेरी ओर ॥
वोलि लेति भीतर घर अपनैं, मुख चूमति, भरि लेति अँकोर।
माखन हेरि देति अपनैं कर, कछु कहि विधि सौं करति निहोर ॥
जहाँ मोहिं देखति, तहँ टेरति, मैं नहिं जात दुहाई तोर।
सूर स्याम हँसि कंठ लगायौ, वै तरुनी कहँ वालक मोर ॥

(५८)

आजु मैं गाइ चरावन जैहौं।
वृन्दावन के भाँति-भाँति फल अपने कर मैं खैहौं ॥
ऐसी वात कहौ जनि वारे, देखौ अपनी भाँति।
तनक-तनक पग चलिहौ कैसैं, आवत ह्वै है राति ॥
प्रात जात गैया लै चारन, घर आवत हैं साँझे।
तुम्हरो कमल वदन कुम्हिलैहै, रेंगत घामहिं माँझे ॥
तेरी सौं मोहिं घाम न लागत, भूख नहीं कछु नेक।
सूरदास प्रभु कह्यौ न मानत, परयौ आपनी टेक ॥

(५९)

वन तैं आवत धेनु चराए।
सन्ध्या समय साँवरे मुख पर, गो - पद - रज लपटाए ॥

बरह-मुकुट कैं निकट लसति लट, मधुप मना रुचि पाए ॥
बिलसत सुधा जलज-आनन पर उड़त न जात उड़ाए।
विधि-वाहन-भच्छन की माला, राजत उर पहिराए ॥
एक बरन बपु नहिं बड़ छोटे, ग्वाल बने इक धाए।
सूरदास बलि लीला प्रभु की, जीवन जन जस गाए ॥

(६०)

घरहीं की इक ग्वारि बुलाई।
छाक समग्री सबै जोरि कैं, वाकैं कर दै तुरत पठाई ॥
कह्यौ ताहि वृन्दावन जैए, तू जाननि सब प्रकृति कन्हाई।
प्रेम सहित लै चली छाक वह, कहँ ह्वै है भूखे दोउ भाई ॥
तुरत जाइ वृन्दावन पहुँची, ग्वाल-बाल कहुँ कोउ न बताई।
सूर स्याम कौं टेरत डोलति, कित हौ लाल छाक मैं लाई ॥

(६१)

आजु बने बन तैं ब्रज आवत।
नाना रंग सुमन की माला, नंद-नँदन-उर पर छबि पावत ॥
संग गोप गोधन-गन लीन्हे, नाना गति कौतुक उपजावत।
कोउ गावत,कोउ नृत्य करत,कोउ उघटत कोउ करताल बजावत ॥
राँभत गाइ बच्छ हित सुधि करि, प्रेम उमँगि थन दूध चुवावत।
जसुमति बोलि उठी हरषित ह्वै, कान्हा धेनु चराए आवत ॥
इतनी कहत आइ गए मोहन, जननी दौरि हिए लै लावत।
सूर स्याम के कृत्य, जसोमति, ग्वाल बाल कहि प्रगट सुनावत ॥

(६२)

मैया बहुत बुरो बलदाऊ।
लग्यौ कहन बन बड़ो तमासौ, सब मौड़ा मिलि जाऊ ॥

मोहूँ कौं चुचकारि गयौ लै, जहाँ सघन बन झाऊ।
भागि चलौ, कहि गयौ उहाँ तैं, काटि खाइ रे हाऊ॥
हौं डरपौं काँपौ अ रोवौं, कोउ नहिं धीर धराऊ।
थरसि गयौ नहिं भागि सकौं, वै भागे जात अगाऊ॥
मोसौं कहत मोल कौ लीनौ, आपु कहावत साऊ।
सूरदास बल बड़ौ चवाई, तैसेहिं मिले सखाऊ॥

(६३)

मैया हौं न चरैहौं गाइ।
सिगरे ग्वाल घिरावत मोसौं, मेरे पाइ पिराइ॥
जौ न पत्याहि पूछि बलदाउहिं, अपनी सौंह दिवाइ॥
यह सुनि माइ जसोदा ग्वालनि, गारी देत रिसाइ॥
मैं पठवति अपने लरिका कौं, आवै मन बहराइ।
सूर स्याम मेरौ अति बालक, मारत ताहि रिंगाइ॥

(६४)

झिरकि कै नारि, दै गारि गिरिधारी तब, पूँछ पर लात दै अहि जगायौ।
उठ्यौ अकुलाइ, डरपाइ खग-राइ कौं, देखि बालक गरब अति बढ़ायौ॥
पूँछ लीन्ही झटकि धरनि सौं गहि पटकि फुंकरत्तौ लटकि करि क्रोध फूले।
पूँछ राखी चाँपि, रिसनि काली काँपि, देखि सब साँपि-अवसान भूले॥
करत फन-घात, विष जात उतरात अति, नीर जरि जात, नहिं गात परसै।
सूर के स्याम, प्रभु लोक-अभिराम, बिनु जान अहिराज विष ज्वाल बरसै॥

(६५)

गोपाल राइ निरतत फन-प्रति ऐसे।
गिरि पर आए बादर देखत, मोरे अनंदित जैसे॥
डोलत मुकुट सीस परहंरि के, कुण्डल - मण्डित गण्ड।

पीत वसन, दामिनि मनु घन पर, तापर सुर - कोदण्ड ॥
उरग - नारि आगैं सब ठाढ़ीं, मुख - मुख अस्तुति गावैं।
सूर स्याम अपराध छमहु अब, हम माँगै पति पावैं ॥

(६६)

लीन्हौं जननि कण्ठ लगाइ।
अंग पुलकित, रोम गदगद, सुख आँसु बहाइ ॥
मैं तुमहिं बरजति रही हरि, जमुन - तट जनि जाइ।
कह्यौ मेरी कान्ह कियौ नहिं, गयौ खेलन धाइ ॥
कंस कमल मँगाइ पठए, तातैं गयउँ डराइ।
मैं कह्यौ निसि सुपन तोसौं, प्रगट भयौ सु आइ ॥
ग्वाल - सँग मिलि गेंद खेलत, आयौ जंमुना तीर।
काहु लै मोहि डारि दीन्ही, कालिमा-दह-नीर ॥
यह कही तब उरग मोसौं, किन पठायौ तोहिं।
मैं कही, नृप कंस पठयौ कमल - कारन मोहिं ॥
यह सुनत डरि कमल दीन्हौ, लियौ पीठि चढ़ाइ।
सूर यह कहि जननि बोधी, देख्यौ तुमहीं आइ ॥

(६७)

व्रज के लोग उठे अकुलाइ।
ज्वाला देखि अकास बराबरि, दसहुँ दिसा कहुँ पार न पाइ ॥
झरहरात बन-पात, गिरत तरु, धरनी तरकि तराकि सुनाइ।
जल बरषत गिरिवर-तर बाँचे, अब कैसें गिरि होत सहाइ ॥
लटकि जात जरि-जरि द्रुम-बेली, पटकत बाँस, काँस, कुस, ताल।
उचटत भरि अंगार गगन लौं, सूर निरखि व्रज-जन बेहाल ॥

(६८)

भहरात झहरात दवा(नल) आयौ।
घेरि चहुँ ओर, करि सोर अंदोर बन, धरनि आकास चहुँ पास छायौ ॥

बरत बन-बाँस, थर रत कुस काँस, जरि उड़त है भाँस, अति प्रबल धायौ ।।
झपटि झपटत लपट, फूल-फल, चट-चटकि, फटत-लटकि द्रुम द्रुमनवायौ ।
अति अगिनि-झार, भंभार धुंधार करि, उचटि अंगार झंझार छायौ ।।
बरत बन-पात, भहरात झहरात अररात तरु महा, धरनी गिरायौ ।।
भए बेहाल सब ग्वाल ब्रज-बाल तब, सरन गोपाल कहिकैं पुकार्‍यौ ।
तृना कैसी संकट बकी बक अघासुर, बाम कर राखि गिरि ज्यौं उबार्‍यौ ।।
नैंकु धीरज करौ, जियहिं कोउ जिनि डरौ, कहा इहि सरौ, लोचन मुंदाए ।
मुठी भरि लियौ, सब नाइ मुखहीं दियौ, सूर प्रभु पियौ ब्रज-जन बचाए ।।

(६९)

खेलत दूरि जात कत प्यारे ।
जब तैं जनम भयौ है तेरौ, तब ही तैं यह भाँति ललारे ।।
कोउ आवति जुवती मिस करिकैं, कोउ लै जात बतास-कलारे ।
अब लगि बचे कृपा देवनि की, बहुत गए मरि शत्रु तुम्हारे ।।
हा हा करति पाइ तेरे लागति, अब जनि दूरि जाहु मेरे बारे ।
सुनहु सूर जसुमति सुत बोधति, बिधि के चरित सबै हैं न्यारे ।।

(७०)

द्रुम चढ़ि काहे न टेरौ कान्हा, गैयाँ दूरि गईं ।
धाईं जातिं सबनि के आगैं, जे वृषभानु दईं ।।
घेरे घिरतिं न तुम-बिनु माधौ, मिलतिं न बेगि दईं ।
बिडरतिं फिरतिं सकल बन महियाँ, एकै एक भईं ।।
छाँड़ि खेड़ सब दौरि जात हैं, बोलो ज्यौं सिखईं ।
सूरदास प्रभु-प्रेम समुझि कैं, मुरली सुनि आइ गईं ।।

(७१)

कहि-कहि टेरत धौरी कारी ।
देखौ धन्य भाग गाइनि के, प्रीति करत बनवारी ।।

मोटी भई चरत बृन्दावन, नन्द- कुँवर की पालीं।
काहे न दूध देहिं ब्रज-पोषन, हस्त-कमल की लाली।।
बेनु स्रवन सुनि, गोवर्धन तैं, तृन दन्तनि धरि चालीं।
आई बेगि सूर के प्रभु पै, ते क्यों भजैं जे पालीं।।

(७२)

रजनी-मुख वन तैं वने आवत, भावत मन्द गयन्द की लटकनि।।
बालक - वृन्द विनोद-हँसावत, करतल लकुट धेनु की हटकनि।।
बिगसति गोपी मनौ कुमुद सर, रूप-सुधा लोचन-पुट घटकनि।
पूरन कला उदित मनु उड़पति, तिहिं छन-विरह-तिमिर की झटकनि।।
लज्जित मनमथ निरखि विमल छवि, रसिक रंग भौंहनि की मटकनि।
मोहन लाल, छवीलौ गिरिधर, सूरदास वलि नागर नटकनि।।

(७३)

देखौ माई सुन्दरता कौ सागर।
वुधि-विवेक-वल पार न आवत, मगन होत मन-नागर।।
तनु अति स्याम अगाध अम्वु-निधि, कटि पट पीत तरंग।
चितवत अधिक रुचि उपजति, भँवर परतिं सव अंग।।
नैंन-मीन, मकराकृत कुण्डल भुज, सरि सुभग भुजंग।
मुक्ता-माल मिलीं मानौ द्वै सुरसरि एकै संग।।
कनक खचित मनिमय आभूषण, मुख स्रम-कन सुख देत।
जनु जल-निधि मथि प्रगट कियौ ससि, श्री अरु सुधा समेत।।
देख सरूप सकल गोपी जन, रहीं विचारि - विचारि।
तदपि सूर तरि सकीं न सोभा, रहीं प्रेम पचि हारि।।

(७४)

राजति रोम-राजी रेष।
नील घन मनु धूम - धारा, रही सूच्छम सेष।।

निरखि सुन्दर हृदय पर, भृगु - पाद परम सुलेख।
मनहुँ सोभित अभ्र - अन्तर, सम्भु - भूषन वेष ॥
मुक्ता - माल नछत्र - गन सम, अर्द्ध चन्द्र विसेष।
सजल उज्ज्वल जलद मलयज, प्रबल बलिनि अलेष।
केकि कच सुर-चाप की छवि दशन तडित सुपेख।
सूर प्रभु की निरखि सोभा, तजे नैंन निमेष ॥

मुरली-स्तुति

(७५)

वंसी री वन कान्हृ बजावत।
आनि सुनौ स्रवननि मधुरे सुर, राज मध्य लै नाम बुलावत ॥
सुर स्रुति तान बँधान अमित अति, सप्त अतीत अनागत-आवत।
जुरि जुग भुज सिर, सेष सैल, मथि वदन-पयोधि, अमृत उपजावत ॥
मनौ मोहिनी बेष धारि कै, मन मोहन मधु पान करावत।
सुन नर मुनि वस किए राग-रस, अधर-सुधा-रस मदन जगावत ॥
महा मनोहर नाद, सूर, थिर चर मोहे, कोउ मरम न पावत।
मानहुँ मूक मिठाई के गुन, कहि न सकत मुख, सीस डुलावत ॥

(७६)

तव तैं वंसी स्रवन परी।
तवहीं तैं मन और भयौ सखि, मो तनु-सुधि विसरी ॥
हौं अपने अभिमान, रूप, जोवन कैं गर्व भरी।
नैंकु न कह्यौ कियौ सुनि सजनि, वादिहिं आइ ढरी ॥
बिनु देखैं अब स्याम मनोहर, जुग भरि जात घरी।
सूरदास सुनि आरज - पथ तैं, कछू न चाड़ सरी ॥

(७७)

मुरली तऊ गुपालहिं भावति।
सुनि री सखी जदपि नँदलालहिं, नाना भाँति नचावति ।।
राखति एक पाइ ठाढ़ौ करि, अति अधिकार जनावति।
कोमल तन आज्ञा करवावति, कटि टेढ़ौ ह्वै आवति ।।
अति आधीन सुजान कनौड़े, गिरिधर नार नवावति।
आपुन पौढ़ि अधर सज्जा पर, कर-पल्लव पलुटावति ।।
भृकुटी कुटिल , नैन नासा-पुट, हम पर कोप करावति।
सूर प्रसन्न जानि एकौ छिन, धरतैं सीस डुलावति ।।

(७८)

बाबा मोकौं दुहन सिखायौ।
तेरैं मन परतीति न आवै,दुहत अँगुरियनि भाव बतायौ ।।
अँगुरी-भाव देखि जननी तब हँसिकैं स्यामहिं कंठ लगायौ।
आठ बरष के कुँवर कन्हैया, इतनी बुद्धि कहाँ तैं पायौ ।।
माता लै दोहनि कर दीन्ही, तब हरि हँसत दुहन कौं धायौ।
सूर स्याम कौं दुहत तब, जननी मन अति हर्ष बढ़ायौ ।।

राधा-कृष्ण मिलाप

(७९)

बूझत स्याम कौन तू गोरी।
कहाँ रहति, काकी है बेटी, देखी नहीं कहूँ ब्रज-खोरी ।।
काहे कौं हम ब्रज तन आवतिं, खेलति रहतिं आपनी पौरी।
सुनत रहतिं स्रवननि नँद-ढोटा, करत फिरत माखन-दधि-चोरी ।।
तुम्हरौ कहा चोरि हम लैहैं, खेलन चलौ संग मिलि जोरी।
सूरदास प्रभु रसिक - सिरोमनि, बातनि भुरइ राधिका भोरी ।।

(८०)

प्रथम सनेह दुहुँनि मन जान्यौं।
नैन - नैन कीन्हीं सब बातैं, गुप्त प्रीति प्रगटान्यौ ।।

खेलन कबहुँ हमारैं आवहुँ, नन्द - सदन, ब्रज गाउँ।
द्वारैं आइ टेरि मोहिं लीजौ, कान्ह हमारौ नाउँ ॥
जौ कहिये घर दूरि तुम्हारौ बोलत सुनियै टेरि।
तुमहिं सौंह बृषभानु बावा की, प्रात - साँझ इक फेरि॥
सूधी निपट देखियत तुमकौं, तातैं करियत साथ।
सूर स्याम नागर, उत नागरि राधा, दोउ मिलि गाथ॥

(८१)

नीबी ललित गही जदुराइ।
जबहिं सरोज धरयौ श्रीफल पर, तब जसुमति गई आइ॥
तत छन रुदन करत मनमोहन, मन मैं बुधि उपजाइ।
देखौ ढीठि देति नहिं माता, राख्यौ गेंद चुराइ॥
तब बृषभानु-सुता हँसि बोली, हम पै नाहिं कन्हाई।
काहे कौं झकझोरत नोखे, चलहु न देउँ बताइ॥
देखि बिनोद बाल सुत कौं तब, महरि चलीं मुसकाइ।
सूरदास के प्रभु की लीला, को जानै इहिं भाइ॥

(८२)

मैया री मैं जानत वाकौं।
पीत उढ़नियाँ जो मेरी लै गई, लै आनौ धरि ताकौं॥
हरि की माया कोउ न जानै, आँखि धूरि सी दीन्हीं।
लाल ढिगनि की सारी ताकौं, पीत उढ़नियाँ कीन्हीं॥
पीताम्बर लै जननि दिखायौ, लै आन्यौ तिहिं पास।
सूर मनहिं मन कहति जसोदा तरुनि पढ़ावति गाँस॥

(८३)

खेलौ जाइ स्याम सँग राधा।
यह सुनि कुँवरि हरष मन कीन्हौं, मिटि गई अंतर-बाधा॥

जननी निरखि चकित रही ठाढ़ी, दम्पति रूप अगाधा ॥
देखति भाव दुहुँनि कौ सोई, जो चित करि अवराधा ॥
सँग खेलत दोउ झगरन लागे, सोभा वढ़ी अवाधा ।
मनहुँ तड़ितघन, इंदु तरिनि, ह्वै बाल करत रस-साधा ॥
निरखत विधि भ्रमि भूलि परयौ तवं,मन-मन करत समाधा ।
सूरदास प्रभु और रच्यौ विधि , सोच भयौ तन दाधा ॥

(८४)

कहत कान्ह जननी समुझाइ ।
जहँ तहँ डारे रहत खिलौना, राधा जनि लै जाइ चुराइ ॥
साँझ सवारैं आवत लागी, चितै रहति मुरली-तन आइ ।
इनहीं मैं मेरे प्रान वसत हैं, तेरे भाएँ नैंकु न माइ ॥
राखि छपाइ,कह्यौ करि मेरौ,वलदाऊ कौं जनि पतिआइ ।
सूरदास यह कहति जसोदा, को लैहै मोहिं लगी वलाइ ॥

(८५)

चितैवो छाँड़ि दै री राधा ।
हिलि-मिलि खेलि स्याम सुन्दर सौं,करति काम कौ वाधा ॥
कै बैठि रहि भवन आपनैं, काहे कौ वनि आवै ।
मृग-नैनी हरि कौ मन मोहति, जव तू देखि दुहावै ॥
कवहुँक करतैं गिरति दोहिनी, कवहुँक विसरति नोई ।
कवहुँक वृषभ दुहत हैं मोहन, ना जानौ का होई ॥

(८६)

वलि जाऊँ गैया दुहि दीजै ।
वूँद परत रँग ह्वै है फीकौ, सुरँग चूनरी भीजै ॥
मीठौ दूध गाइ धूमरि कौ, कछु दीजै कछु पीजै ।
सूर स्याम-दरसन कैं कारन, अधिक निहोरौ कीजै ॥

(८७)

तुम पै कौन दुहावै गैया।
लिए रहत हौ कनक-दोहनी, वैठत हौ अधपैया॥
अति रस काम की प्रीति जानि कै, आवत खरिक दुहैया।
इत चितवत, उत धार चलावत, यहै सिखायौ मैया ?
गुप्त प्रीति तासौं करि, मोहन जो है तेरी दैया।
सूरदास प्रभु झगरौ सीख्यौ, ज्यौं घर खसम गुसैंया॥

इंद्र-शरणागमन

(८८)

मेरौ कह्यौ सत्य करि जानौ।
जौ चाहौ व्रज की कुसलाई, तौ गोवर्धन व्रज मानौ॥
दूध दही तुम कितनौ लैहौ, गोसुत वढ़ै अनेक।
कहा पूजि सूरपति सौं पायौं, छाँड़ि देहु यह टेक॥
मुंह माँगे फल जौ तुम पावहु, जौ मानहु मोहि।
सूरदास प्रभु कहत ग्वाल सौ, सत्य वचन करि दोहि॥

(८९)

नीकैं धरौ नन्द-नँदन वल-वीर।
गिरि जनि परै, टरै नख तैं जनि, कौन सहैगी भीर॥
चहुँ दिसि पवन झकोरत, घोरत मेघ-घटा गम्भीर।
उनै-उन बरषत गिरि ऊपर, धार अखण्डित नीर॥
अन्ध-धुन्ध अम्बर तैं गिरि पर, परत वज्र के तीर॥
चमकि-चमकि चपला चकचौंधति, स्याम कहत मन धीर॥
कर जोरत, कुल देव मनावत, व्रज के गोप-अहीर।
पय-पकवान-बिहान पूजिहैं, लै दधि-मधु-घृत-खीर॥

गोपी - ग्वाल गाइ-गोसुत सब, रहैं सुख सहित सरीर।
सूर स्याम गिरि धरयौ वाम कर, मेघ भये अति सीर।।

(९०)

देखौ माई बदरनि की बरियारी।
कमल नैन कर भार लिए हैं, इन्द्र ढीठ झरि लाई।।
जाकैं राज सदा सुख कीन्हौं, तासौं कौन बड़ाई।
सेवक करै स्वामि सौं सरवरि, इन बातनि पति जाई।।
इन्द्र ढीठ वलि खात हमारी, देखौ अकिल गँवाई।
सूरदास तिहिं बन काकौ डर, जिहिं बन सिंह सहाई।।

(९१)

सुरगन सहित इन्द्र व्रज आवत।
धवल वरन ऐरावत देख्यौ उतरि गगन तैं धरनि धँसावत।।
अमरा-सिव-रवि-ससि-चतुरानन हय-गय वसह-हंस-मृग जावत।
धर्मराज, वनराज, अनल दिव, सारद, नारद, सिव-सुत भावत।।
मेढ़ा, महिप, मगर, गुदरारौ, मोर, आखुमन-वाहन, गावत।
व्रज के लोग देखि डरपे मन, हरि आगैं कहि कहि जु सुनावत।।
सात दिवस जल वरषि सिरान्यौ, आवत चल्यौ व्रजहिं अतुरावत।
घेरौ करत जहाँ तहँ ठाढ़े, व्रजवासिनि कौं नाहिं बचावत।।
दूरहि तैं वाहन सौं उतारयौ, देवनि सहित चल्यौ सिर नावत।
आइ परयौ चरननि तर आतुर, सूरदास प्रभु सीस उठावत।।

(९२)

जबहिं बन मुरली स्रवन परी।
चकित भई गोप - कन्या सब, काम - धाम बिसरीं।।
कुल मर्जाद वेद की आज्ञा, नैंकुहुँ नहीं डरीं।।
स्याम - सिन्धु, सरिता-ललना-गन, जल की ढरनि ढरीं।।

अंग मरदन करिबै कौं लागीं, उबटन तेल धरी ।।
जो जिहिं भाँति चली सो तैसेहिं, निसि वन कौं जु खरी ।।
सुत - पति - नेह, भवन - जन - संका, लज्जा नाहिं करी ।
सूरदास प्रभु मन हरि लीन्हौं, नागर नवल हरी ।।

रास-लीला

(९३)

रास - मण्डल - मध्य स्याम राधा ।
मनौ घन वीच दामिनी कौंधति सुभग,
एक है रूप, द्वै नाहिं वाधा ।।
नायिका अष्ट अष्टहु दिसा सोहहीं
बनी चहुँ पास सब गोप - कन्या ।
मिले सब संग नहिं लखत कोउ परसपर,
बने षट - दस सहस्र कृष्न सन्या ।।
सजे शृंगार नव-सात जगमगि रहे अंग-भूषन,
रैंन बनी तैसी ।
सूर - प्रभु नवल गिरिधर, नवल राधिका,
नवल ब्रज - नारि - मण्डली जैसी ।।

(९४)

जब हरि मुरली-नाद प्रकास्यौं ।
जंगम जड़, थावर चर कीन्हे, पाहन जलज विकास्यौं ।।
स्वर्ग-पताल दसौं दिसि पूरन, ध्वनि-आच्छादित कीन्हौं ।
निसिं हरिं कल्प समान बढ़ाई, गोपिनि कौं सुख दीन्हौ ।।
मैंमत भए जीव जल-फल के, तनु की सुधि न सम्हार ।
सूर स्याम-मुख वेनु मधुर सुनि, उलटें सब व्यवहार ।।

(९५)

मुरली सुनत अचल चले।
थके जर, जल झरत पाहन, विफल वृच्छ फले।।
पय स्रवत गोधननि थन तैं, प्रेम पुलकित गात।
झ्रे द्रुम अंकुरित पल्लव, विटप चंचल पात।।
सुनत खग-मृग मौन साध्यौ, चित्र की अनुहारि।
धरनि उमंगि न माति उर मैं, जती जोग बिसारि।।
ग्वाल गृह-गृह सबै सोवत, उहैं सहज सुभाई।
सूर-प्रभु रस रास के हित, सुखद रैनि वढ़ाई।।

(९६)

तुम कहुँ देख स्याम बिसासी।
तनक वजाइ बाँस की मुरली, लै गए प्रान निकासी।।
कबहुँक आगैं, कबहुँक पाछैं, पग - पग भरति उसासी।
सूर स्याम-दरसन के कारन, निकसीं चन्द - कला सी।।

(९७)

बहुरि स्याम सुख - रास कियौ।
भुज-भुज जोरि जुरीं व्रजबाला, वैसेई रस उमँगि हियौ।।
वैसैहिं मुरली नाद प्रकास्यौ, वैसैहि सुर-नर बस्य भए।
वैसैहिं उड़गन-सहित निसापति, वैसैहिं मारग भूलि गए।।
वैसैहि दसा भई जमुना की, वैसैहिं गति ज़नि पवन थक्यौ।
वैसैहि नृत्य तरंग बढ़ायौ, वैसैहिं बहुरौ काम जग्यौ।।
वहै निसा, वैसैहिं मन जुवती, वैसैहिं हरि सबनि भजें।
सूर स्याम वैसैइ मन - मोहन, प्यारी निरखि लजे।।

(९८)

मैं हरि की मुरली बन पाई।

सुनि जसुमति सँग छाँड़ि आपनौ कुँवर जगाइ दैन हौं आई ।।
सुनतहिं बचन बिहँसि उठि बैठे, अन्तरजामी कुँवर कन्हाई ।
याकैं हुती मेरी पहुँची, दै राधे वृषभानु - दुहाई ।।
मैं नाहिंन चित लाइ निहारयौ, चलौ ठौर सब देउँ बताई ।
सूरदास प्रभु मिली अन्तर गति, दुहुंनि पँढ़ी एकै चतुराई ।।

(९९)

जागिय गुपाल लाल ग्वाल द्वार ठाढ़े ।
रैनि - अन्धकार गयौ, चन्द्रमा मलीन भयौ, तारागन
देखियत नहिं तरनि - किरनि. बाढ़े ।।
मुकुलित भए कमल-जाल, गूंज करत भृंग-माल, प्रफुलित बन
पुहुप डाल, कुमुदिनि कुँभिलानी ।
गंध्रबगन गान गरत, स्नान दान नेम धरत, हरत सकल पाप.
बदत बिप्र बेद - बानी ।।
बोलत नन्द बार-बार देखैं मुख तुव कुमार, गाइनि भई
बड़ी बार, बृन्दाबन जैवैं ।
जननि कहति उठो स्याम, जानत, जिय रजनि ताम.
सूरदास- प्रभु कृपालु, तुमकौं कछु खैवै ।।

(१००)

ग्वालिनि तुम कत उरहन देहु ?
पूछहु जाइ स्याम सुन्दर कौं, जिहिं दुख जुरयौ सनेहु ।।
जन्मत ही तैं भई बिरत चित, तज्यौ गाउँ, गुन गेहु ।
एकहिं पाउँ रही हौं ठाढ़ी, हिम-ग्रीषम-ऋतु गेहु ।।
तज्यौ मूल साखा - सुपत्र सब, सोच सुखानी देहु ।
अगिनि सुलाकत मुरयौ न तन मन, बिकट बनावत बेहु ।।
बकतीं कहा बाँसुरी कहि-कहि, करि-करि तामस तेहु ।
सूर स्याम इहिं भाँति रिझै, किनि, तुमहूँ अधर-रस लेहु ।।

(१०१)

मेरे दुख कौ ओर नहीं।
षट रितु सीत उष्न बरषा मैं, ठाढ़े पाइ रही॥
कसकी नहीं नेकुहुँ काटत, घामैं राखी दारि।
अगिनि - सुलाक देत नहिं मुरकी, बेह बनावत जारि॥
तुम जानति मोहिं बाँस बाँसुरिया, अगिनि छाप दै आई।
सूर स्याम ऐसैं तुम लेहु न, खिझति कहा हौ माई॥

(१०२)

तू मोहीं कौं मारन जानति।
उनके चरित कहा कोउ जानै, जनहिं कही तू मानति॥
कम - तीर तैं मोहिं बुलायौ, गढ़ि - गढ़ि बातैं बानति।
मटकत गिरी गागरी सिर तैं, अब ऐसी बुधि ठानति॥
फिर चितई तू कहाँ रह्यौ कहि मैं नहिं तोकौं जानति।
सूर सुतहिं देखत ही रिस गई, मुख चूमति उर आनति॥

(१०३)

कान्ह अब लँगराई हौं जानी।
मागत दान दही कौं अबलौं, अब कछु औरै ठानी॥
औरनि सौं तुम कहा लियौ है, हमहि दिखावहु आनी।
माँगत हे दधि सो हम दीन्हौ, कहा कहत यह बानी॥
छाँड़ि देहु अँचरा फटि जैहै, तुमकौं हम पहिचानी।
सूर स्याम तुम रति-पति-नागर; नागरि अतिहिं सयानी॥

(१०४)

मैं तुम्हारे मन की सब जानी।
आपु सबै इतराति फिरति हौं, दूषन देति स्याम कौं आनी॥
मेरौ हरि कहँ दसहिं बरस को, तुमरी जोवन-मद उमदानी॥

लाज नहिं आवति इन लंगरिनि,कैसे धौं कहि आवति वानी ।।
आपुहिं तोरि हार चोली-बँद, उर नख-घात बनाइ निसानी ।
कहाँ कान्ह को तनक अँगुरियाँ,यह कहि वार-बार पछितानी ।।
देखहुँ जाइ और काहू कौं, हरि पर सबहिं रहति मँड़रानी ।
सूरदास प्रभु मेरौ नान्हौ तुम तरुनी डोलति अठिलानी ।।

(१०५)

बैंचन चली दधि ब्रजनारि ।
सीस धरि-धरि माट मटुकी, बढ़ी सोभा भारि ।।
निकसि ब्रज के गई ग्वैंडैं हरष सुकुमारि ।
चलीं गावत कृष्ण के गुन, हृदय ध्यान विचारि ।।
सबनि कैं मन जौ मिलै हरि,कोउ न कहति उघारि ।
सूर-प्रभु घटघटहिं व्यापी, जानि लई बनवारि ।।

(१०६)

को माता को पिता हमारैं ।
कब जनमत हमका तुम देख्यौ, हँसियत वचन तुम्हारैं ।।
कब माखन चोरी करि खायौ, कब बाँधे महतारी ।
दुहत कौन को गैया चारत, बात कही यह भारी ।।
तुम जानत मोहिं नन्द - ढुटौना, नन्द कहाँ तैं आए ।
मैं पूरन अविगत, अबिनासी, माया सबनि भुलाए ।।
यह सुनि ग्वालि सबै मुसुक्यानी, ऐसे गुन हौ जानत ।
सूर स्याम जो निदरयौ सबहीं, मात-पिता नहिं मानत ।।

(१०७)

मोसौं कहा दुरावति नारि ।
नैन सैन दै चितहिं चुरावति, यहै मन्त्र टोना सिर डारि ।।
भौंह धनुष, अंजन गुन ऐंचति, बान कटाच्छनि डारति मारि ।

तरिवन-स्रवन फाँसि गर डारति, कैंसेहुँ नाहिं सकत निरवारि।।
पीन उरज मुख-नैंन चखावति, यह विष-मोदक जात न झारि।
घालति छूरी प्रेम की मानी, सूरदास को सकैं सम्हारि।।

(१०८)

राधा सौं माखन हरि माँगत।
औरनि की मटुकी कौं खायौ, तुम्हरौ कैसौ लागत।।
लै आई वृषभानु सुता, हँसि सद लवनी है मेरौ।
लै दीन्हौं अपनैं कर हरि-मुख, खात अल्प हँसि हेरौ।।
सबहिनि मीठौ तैं दधि है यह, मधुरैं कह्यौ सुनाइ।
सूरदास - प्रभु सुख उपजायौ, ब्रज ललना मनभाइ।।

(१०९)

मेरे दधि की हरि स्वाद न पायौ।
जानत इन गुजरिनि कौ सौ है, लयौ छिड़ाइ मिलि ग्वालिनि खायौ।।
धौरी धेनु दुहाइ छानि पय, मधुर आँचि मैं औटि सिरायौ।
नई दोहनी पौंछि पखारी, धरि निरधूम खिरनि पै तायौ।।
तामैं मिलि मिस्रित मिसिरी करि, दै कपूर-पुट जावत नायौ।
सुभग ढकनियाँ ढाँकि बाँधि पट, जतन राखि छीकैं समुदायौ।।
हौ तुम कारन लै आई गृह, मारग मैं न कहूँ दरसायौ।
सूरदास-प्रभु रसिक-सिरोमनि, कियौ कान्ह ग्वालिनि मन भायौ।।

(११०)

करन दै लोगनि कौं उपहास।
मन क्रम बचन नंद - नन्दन कौं, नैंकु न छाड़ौं पास।।
सब या ब्रज के लोग चिकनियाँ, मेरे भाऐं घास।
अब तौ यहै बसी री माई, नहिं मानौं गुरु त्रास।।

कैसें रह्यौ परे री सजनी, एक गाँव के वास।
स्याम मिलन की प्रीति सखी री, जानत सूरजदास॥

(१११)

तब नागरि मन हरष भई।
नेह पुरातन जानि स्याम कौ, अति आनन्द - भई॥
प्रकृति पुरुष, नारी मैं वै पति, काहैं भूलि गई।
को माता, को पिता, बन्धु को, यह तौ भेंट नई॥
जन्म-जन्म, जुग-जुग यह लीला, प्यारी जानि लई।
सूरदास-प्रभु की यह महिमा, यातैं विवस भई॥

गोपिका-विरह

(११२)

यसोदा कान्ह कान्ह कै बूझैं।
फूटि न गईं तिहारी चारौ, कैसे मारग सूझैं॥
इक तनु जरो जात बिन देखे, अब तुम दीने फूँक।
यह छतियाँ मेरे कुँवर कान्ह बिनु फटि न गई द्वै टूक॥
धृग तुम धृग कै चरन अहो पति, अध बोलत उठि धाये।
सूर स्याम बिछुरन की हम पै, दैन बधाई आए॥

(११३)

अब कछु औरहि चाल चली।
मदन गोपाल बिना या तनु की, सबै बात बदली॥
गह कन्दरा समान सेज भई, चाहि सिंह हू थली।
सीतल चन्द्र सु तौ सखि कहियत, तिनहूँ अधिक जली॥
मृग मद. मलय कपूर कुमकुमा, सींचति आनि अलीं।
एक न फुरत बिरह ज्वर तैं कछु, लागति नाहिं भली॥

वह ऋतु अमृत लता सुनि सूरज, अब विष फलनि फली।
हरि विधु मुख नहिं नहिनै फूलति, मनसा कुमुद कली॥

(११४)

सखी इंन नैनन तैं घन हारे।
बिनु ही ऋतु बरसत निसि-बासर, सदा मलिन दोउ तारे॥
ऊरध स्वास समीर पेज अति, सुख अनेक द्रुम डारे।
दिसन सदन करि बसे वचन खग, दुख पावस के मारे॥
ढुरि ढुरि बूंद परत कंचुकि पर, मिलि काजर सौं कारे॥
मानौं परम कुटी सिच कीन्हीं, बिवि मूरति धरि न्यारे॥
सुमरि सुमिरि गरजंत जल छाँड़त, अंसु सलिल के धारे।
बूढ़त ब्रजहिं सूर कौ राखै, बिन गिरिवर धर प्यारे॥

(११५)

मेरे नैंना विरह की बेलि बई।
सींचत नीर नैन के संजनी, मूल पताल गई॥
बिकसति लता सुभाइ आपने, छाया सघन भई।
अब कैसे निरुवारौं सजनी, सब पन पसरि छई॥
को जानै काहू के जिय की, छिन छिन होत नई।
सूरदास स्वामी के बिछुरे, लागे प्रेम झई॥

(११६)

प्रीति करि काहू सुख न लह्यौ।
प्रीति पतंग करी दीपक सौं, आपै प्रान दह्यौ॥
अलिसुत प्रीति करी जलसुत सौं, संपति हाथ गह्यौ॥
सारँग प्रीति करी जो नाद सौं, संमुख बान सह्यौ॥
हम जो प्रीति करी माधौ सौं, चलत न कछू कह्यौ।
सूरदास प्रभु बिनु दुख दूनौ, नैननि नीर बह्यौ॥

(११७)

बहुत दिन जीवौ पपीहा प्यारे।
बासर रैनि नाँव लै बोलत, भयो विरह ज्वर कारे ॥
आपु दुखित पर दुखित जानि जिय, चातक नावँ तुम्हारे।
देखौ सकल विचारि सखी जिय, बिछुरन को दुख न्यारे ॥
जांहि लगै सोई पै जानै, प्रेम बान अनियारे।
सूरदास प्रभु स्वाँति बूँद लगि, तज्यौ सिन्धु करि खारे ॥

(११८)

हंस काग कौ संग भयौ।
कहँ गोकुल कहँ गोप गोपिका, विधि यह संग दयौ ॥
जैसे कंचन काँच संग ज्यों, चन्दन संग कुगन्धि।
जैसे खरी कपूर दोउ यक, यह भई ऐसी सन्धि ॥
जल बिन मीन रहत कहुँ न्यारे, यह सो रीति चलावत।
जब ब्रज की बातें यहि कहियत, तबहिं तबहिं उचटावत ॥
याको ज्ञान थापि ब्रज पठऊँ, और न याहि उपाय।
सुनहु सूर याक वन पठऊँ, यहै वनगो दाँव ॥

(११९)

सुन सखा, हित प्रान मेरे नाहिनै सम तोहिं।
कैसेहूँ करि उऋण कीजो, ब्रज वधुन तें मोहिं ॥
त्यागि मैंने रतन दीन्हों, वृथा गोप कुमारि।
सालोक्य सामीप्य ना, सारोपिता भुज चारि।
अंग रही साजो चिन्ता सों, सन्धि नहीं तनु ज्ञान।
सोई तुम उपदेसहू जो, लहैं पद निर्वान ॥
जौन अब के कृत करै तो, होइ हौ ऋणदास।
सूर गाइ चराइहौं ह्वै, फेरि बसि ब्रजवास ॥

(१२०)

कह्यौ कान्ह सुन यसुमति मैया।
आवहिंगे दिन चारि पाँच में, हम हलधर दोउ भैया।।
मुरली बेत विषान देखियो, सृंगी बेर सबेरौ।
लै जिनि जाइ चुराइ राधिका, कछुक खिलौना मेरौ।।
जादिन तैं तुम सौं बिछुरे हम, कोउ न कहत कन्हैया।
भोरहिं नाहिं कलेऊ कीनो, साँझ न पियौ अघैया।।
कहत न बन्यौ सँदेसो मोपै, जननि जितो दुख पायौ।
अब हमसौं वसुदेव देवकी, कहत आपनौं जायौ।।
कहिये कहा नन्द बाबा सौं, बहुत निठुर मन कीनौं।
सूर हमहिं पहुँचाइ मधुपुरी, बहुरो सोध न लीनौं।।

(१२१)

कोउ व्रज बाँचत नाहिन पाती।
कत लिखि लिखि पठवत नँदनन्दन, कठिन बिरह की काँती।।
नैन सजल कागद अति कोमल, कर अँगुरी अति ताती।
परसैं जरै बिलोकैं भीजैं, दुहूँ भाँति दुख भाँती।।
म्यों ए बचन सु अंक सूर सुनि, बिरह मदन सरघाती।
मुख मृदु बचन बिना सींचे अब, जिवहिं प्रेम रस माती।।

(१२२)

सुनहु, गोपी हरि कौ सन्देस।
करि समाधि अन्तर्गति ध्यावहु, यह उनकौ उपदेस।।
वै अविगति अविनासी पूरन, सब घट रहे समाइ।
निर्गुन ज्ञान बिने मुक्ति नहीं है, वेद पुराननि गाइ।।
सगुन रूप तजि निर्गुन ध्यावो, इक चित इक मन लाइ।
यह उपाव करि बिरह तरौ तुम, मिलै ब्रह्म तब आइ।।

दुसह सँदेस सुनत माधौ को, गोपीजन बिलखानी।
सूर बिरह की कौन चलावै, बूड़त मन बिन पानी॥

(१२३)

मधुकर, काके मीत भए।
दिवस चारि करि प्रीति सगाई रस लै अनत गए॥
डहकत फिरत आपने स्वारथ, पाखँड उग्र दए।
चाउ सरै पहिचानत नाहिन, प्रीतम करत नए॥
मुंडउ बाँटि मेलि बौराए, मन हरि हरि जु लए।
सूरदास प्रभु दूत धर्म ढिग, दुख के बीज बए॥

(१२४)

अँखियाँ हरि दरसन की भूखी।
अब कैसे रहति स्याम रंगराती, ए बातें सुनि रूखी॥
अवधि गनत इक टक मग जोवत, तब ए इत्यौं नहिं झूखी।
इते मान इहि योग संदेसन, सुनि अकुलानी दूखी॥
सूर सकत हठ नाव चलावत, एक सरिता हैं सूखी।
बारक वह मुख आनि देखावहु, दुहिपै पिवत पतूखी॥

(१२५)

सखी री मथुरा में द्वै हंस।
वै अक्रूर ए ऊधौ सजनी, जानत नीके ग्रंस॥
ए दोऊ नीर खीर निरवारत, इनहिं बधायो कंस।
इनके कुल ऐसी चलि आई, सदा उजागर बंस॥
अब इन कृपा करी ब्रज आए जानि आपनो अंस।
सूर सुयोग सिखावत अबलनि सुनत होय मति भ्रंस॥

(१२६)

हमकौं हरि की कथा सुनाउ।
ए आपनी ज्ञान-गाथा अलि, मथुरा ही लै जाउ॥

वे नरनारि समुझैंगी, तेरौ वचन वनाउ।
पालागौं ऐसीं इन बातनि, उनही जाइ रिझाउ॥
जो सुचि सखी स्यामसुन्दर कौ, अरु जिय अति सति भाउ।
तौ बारक आतुर इन नैननि, यह मुख आनि दिखाउ॥
जो कोउ कोटि करै कैसें हू, विधि विद्या व्यौसाउ।
तौ सुन सूर मीन के जल बिनु, नाहिंन और उपाउ॥

(१२७)

गोपी सुनहु हरि संदेस।
कह्यौ पूरन ब्रह्म ध्यावो; त्रिगुन मिथ्या भेष॥
मैं कहौं सो सत्य मानहू, त्रिगुन डारौ नास।
पंच त्रय गुन सकल देही, जगत ऐसो भास॥
ज्ञान विनु नर मुक्ति नाहीं, यह विषै संसार।
रूप रेख न नाम गुन, करन और न साइ॥
मात पितु कोउ नाहिं नारी, जगत मिथ्या लाइ।
सूर सुख दुख नाहिं जाके, भजो ताको जाइ॥

(१२८)

मेरो मन अनत कहाँ सचुपावै।
जैसे उड़ि जहाज को पंछीं, पुनि जहाज पै आवै॥
जिहि मधुकर अमृत रस चाख्यौ, क्यों करील फल भावै।
सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै॥

(१२९)

मधुकर, यह कारे की रीति।
मन दे हरत परायो सरवसु, करे कपट की प्रीति॥
ज्यों षटपद अम्बुज के दल में, बसत निसा रति मानि।
दिनकर डार अनत उड़ि बैठे, फिरि न करत पहिचान॥

भवन भुजंग पिटारे पाल्यौ, ज्यों जननी जिय तात।
कुल करतूति जाति नहि कबहूँ, सहज सु उसि-भजि जात।।
कोकिल काग कुरंग स्याम घन, हमहिं न देके भावैं।
सूरदास अनुहारि स्याम की छिन-छिन सुरति करावैं।।

(१३०)

ऊधौ, कोकिल कूजत कानन।
तुम हमको उपदेस करत हौ, भस्म लगान आनन।।
औरो सींगी सखी संग लै, टेरट चढ़ै पचानन।
बहुरो आइ पपीहा के मिस, मदन दहत निज बानन।।
हम तौ निपट अहीरि बावरी, योग दीजिए जानन।।
कहा कथत मोसी के आगे, जानत नानी नानन।।
तुम तौ हमहिं सिखावन आये, मुक्ति होइ निर्वानिन।
सूर मुक्ति कैसे सूजति है, वा मुरली के तानन।।

(१३१)

हमारे हरि हारिल की लकरी।
मन क्रम वचन नँद नँदन उर, यह दृढ़ करि पकरी।।
जागत सोवत स्वप्न दिवस निसि, कान्ह कान्ह जकरी।
सुनत योग लागत हमैं ऐसौ, ज्यों करुई ककरी।।
सुतौ व्याधि हमको लै आयै, देखी सुनि न करी।
यह तौ सूर ताहि लै सौंपौ, जिनके मन चकरी।।

गोपी-उद्धव-संवाद

(१३२)

मधुकर इतनो कहियौ जाय।
अति कृस गात्त भई ए तुम बिनु, परम दुखारी गाय।।
जल समूह बरसति दोउ आँखनि, हुँकति लीने नाऊँ।

जहाँ तहाँ गोदोहन कीन्हों, सूँघति सोई ठाऊँ॥
परति पछार खाइ छिन ही छिन, अति आतुर ह्वै दीन।
मानहुँ सूर काढ़ि डारी है, वारि मध्य तैं मीन॥

(१३३)

अब अति चकितवंत मन मेरो।
आयौ हों निर्गुन उपदेसन, भयो सगुन कौ चेरो॥
मैं कछु ज्ञान कह्यौ गीता को, तुमहिं न परहै नेरो।
अति अज्ञान जानि कै अपनो, दूत भयौ उन केरो॥
निज जन जानि इहाँ हरि पठयौ, दीनौं बोझ घनेरो।
सूर मधुप उठि चले मधुपुरी, बोरि योग को बेरो॥

कृष्ण-उद्धव-संवाद

(१३४)

कहा लौं कहिये ब्रज की बात।
सुनहु स्याम तुम बिनु उन लोगनि, जैसे दिवस बिहात॥
गोपी ग्वाल गाइ गोसुत कै, मलिन बदन कृस गात।
परम दीन जनु सिसिर हेम इत, अम्बुजगन बिन पात॥
जो कहुँ आवत देखि दूरितैं, सब पूँछति कुसलात।
चलन न देत प्रेम आतुर उर, कर चरनन लपटात॥
पिक चातक बन बसन न पावहिं, वायस बलिहि न खात।
सूर स्याम संदेसन के डर, पथिक न उहि मग जात॥

(१३५)

बातैं सुनौं तौं स्याम सुनाऊँ।
वै उमँगी जलनिधि तरंग ज्यौं, तामें थाह न पाऊँ॥
कौन कौन कौ उत्तर दीजै, तातें भयौ अगाऊँ।

वे मेरे सिर पटिया पारैं, कंथा काहि उढ़ाऊँ॥
एक अँधेरो हिये की फूटी, दौरत पहिर खराऊँ।
सूर सकल षट दरसन वे हैं, बारहखरी पढ़ाऊँ॥

(१३६)

दिन दस घोष चलहु गोपाल।
गाइन के अवसेर मिटावहु, लेहु आपने ग्वाल॥
नाचत नहीं मोर ता दिन तैं, बोले न वर्षा काल।
मृग दुबरे बिनु दरस तुम्हारे, सुनत न बेनु रसाल॥
बृन्दावन हर्यौ होत न भावत, देखो स्याम तमाल।
सूरदास मैया अनाथ है, घर चलिये नँदलाल॥

(१३७)

ऊधौ मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।
हंस सुता को सुन्दरि कगरी, अरु कुञ्जन की छाहीं॥
वै सुरभी, वै वच्छ दोहनी, खरिक दुहावन जाहीं।
ग्वालबाल सब करत कुलाहल नाचत गहि गहि बाहीं॥
यंह मथुरा कंचन की नगरी मनि मुक्ताहल जाहीं।
जबहिं सुरति आवति वा सुख की जिय उमगत, तनु नाहीं॥
अनगन भाँति करी बहु लीला जसुदानन्द निबाहीं।
सूरदास प्रभु रहै मौन ह्वै यह कहि कहि पछिताहीं॥